अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

# सर्वोदय जगत

वर्ष- 44, अंक- 4, 1-15 अक्टूबर 2020

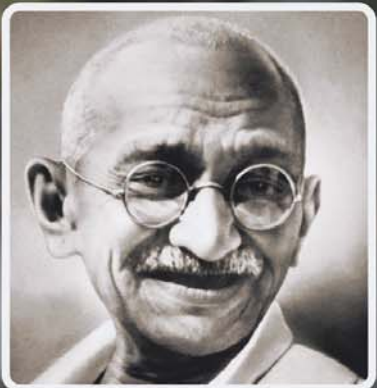

किसान किसी के तलवार-बल के बस न तो कभी हुए हैं और न होंगे। वे तलवार चलाना नहीं जानते, न किसी की तलवार से वे डरते हैं। वे मौत को हमेशा अपना तकिया बना कर सोने वाली महान प्रजा हैं। उन्होंने मौत का डर छोड़ दिया है। ... बात यह है कि किसानों और प्रजा मंडलों ने अपने और राज्य के कारोबार में सत्याग्रह को काम में लिया है। जब राजा जुल्म करता है तब प्रजा रूठती है। यह सत्याग्रह ही है।

- महात्मा गांधी

सर्व सेवा संघ
( अखिल भारत सर्वोदय मंडल )
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
# सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

**वर्ष : 44, अंक : 04, 01-15 अक्टूबर 2020**

*कार्यकारी अध्यक्ष*
**चंदन पाल**

*संपादक*
**बिमल कुमार**
*सहसंपादक*
**प्रेम प्रकाश**
**09453219994**
*संपादक मंडल*
**डॉ. रामजी सिंह** **भवानी शंकर कुसुम**
**प्रो. सोमनाथ रोडे** **अरविन्द अंजुम**
**अशोक मोती**

*संपादकीय कार्यालय*
**सर्व सेवा संघ**
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
**फोन :** 0542-2440-385/223
**ईमेल :** sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

**शुल्क**

| | | |
|---|---|---|
| एक प्रति | : | 05 रुपये |
| वार्षिक | : | 100 रुपये |
| आजीवन | : | 1000 रुपये |

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC Code : UBIN0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

## इस अंक में...

1. संपादकीय... 2
2. दोराहे पर खड़ा सर्वोदय समाज... 3
3. चंदन पाल : एक परिचय 6
4. गांधी का करुण रस 7
5. कृषि कानून बिलों के पास हो जाने... 9
6. हरिवंश कथा और संसदीय व्यथा... 10
7. हरिवंश का 'आहत' होना... 11
8. किसान आंदोलन और विश्व बैंक के चाबी... 12
9. व्यापारियों के रहमोकरम पर किसान... 13
10. राज्यों को आर्थिक तौर पर कंगाल... 15
11. देश बेचने वालों से निपटना जरूरी... 16
12. खैरात की मानसिकता से संक्रमित... 18
13. गतिविधियां एवं समाचार... 19
15. कविताएं... 20

**संपादकीय**

# गांधी-150 : नये परिदृश्य में

गांधी-150 कई संकल्पों को पूरा करने का वर्ष था, गांधी के तेज को पुनर्जीवित करने का वर्ष था। लेकिन हम कितना कर पाये, इस पर आत्मनिरीक्षण व आत्ममंथन करें। गांधीजी को मानने वाले लोग कितनी आपसी एकता तथा कितनी लोक एकता का निर्माण कर सके, इस पर भी विचार करें। गांधी कहा करते थे कि "Organisation is the test of non-violence" अहिंसा के इस test (परीक्षा) में हम और हमारा संगठन कितना खरा उतरा।

गांधीजी ने वर्तमान योरोपीय सभ्यता को एक सिरे से खारिज कर दिया था। क्योंकि इसमें नैतिक बल/आत्मबल का समावेश नहीं था। केवल भौतिक पदार्थों के ज्ञान एवं भौतिक विकास पर बल था। बिना आत्मबल के आत्मज्ञान संभव नहीं है और बिना आत्मबल व आत्मज्ञान के स्वराज्य संभव नहीं है। स्वराज्य का यह वैयक्तिक पक्ष है। स्वराज्य का सामूहिक पक्ष यह है कि मनुष्य जिस समुदाय में रहता है, उस समुदाय का आदर्श नैतिकता के ताने-बाने पर खड़ा होगा। यही आदर्श समुदाय में मनुष्यों के परस्पर संबंधों को निर्धारित करने वाला होगा। इस सामुदायिक आदर्श का प्रकटीकरण ग्राम स्वराज्य में होगा।

लेकिन हम वैयक्तिक आत्मबल तथा आदर्श नैतिकता आधारित ग्राम स्वराज्य के लक्ष्य से दूर होते चले गये। योरोपीय आधुनिकता को अपनाने का मतलब था कि उस आधुनिकता से उपजी केन्द्रीकृत व्यवस्थाओं को अपनाते जाना। सत्ता अधिकाधिक केन्द्रीकृत होती गयी, जिससे लोकसत्ता की अवधारणा धूमिल होती गयी। अर्थव्यवस्था केन्द्रीकृत होती गयी, जिससे पूंजी का केन्द्रीकरण होता गया, विश्व भर के प्राकृतिक संसाधनों पर कॉरपोरेट जगत का नियंत्रण बढ़ता गया तथा श्रमिक उत्पादक, उत्पादन के साधनों से बेदखल होता गया। मैनुफैक्चरिंग क्षेत्र में तो ये पहले ही हो चुका था। अब कृषि क्षेत्र में भी ऐसा किया जा रहा है। कृषि क्षेत्र में बदलाव के लिए जो कानून बनाये गये हैं, वे इसी का प्रमाण हैं।

पहली बात, कृषि क्षेत्र में बदलाव के लिए लाये गये ये कानून, कृषि क्षेत्र को, खाद्य सुरक्षा एवं खाद्य सम्प्रभुता के व्यापक लक्ष्य एवं फ्रेमवर्क से अलग-थलग करने वाले हैं। खाद्य सुरक्षा नागरिकों का बुनियादी अधिकार है। साथ ही खाद्य सम्प्रभुता के बिना राष्ट्र की सम्प्रभुता बहुत कमजोर हो जायेगी।

दूसरी बात, नये कानूनों के फलस्वरूप भारतीय कृषि अब वैश्विक कृषि व्यापार के नियंत्रण में चली जायेगी। कृषि उत्पाद भी वैश्विक पूंजीवादी बाजार के दायरे में समाहित हो जायेगा। कृषि क्षेत्र में लगने वाले इनपुट एवं उत्पाद दोनों के वैश्विक पूंजी के नियंत्रण में जाने से पूंजीवादी कृषि के विकास का रास्ता प्रशस्त हो जायेगा। मैनुफैक्चरिंग (विनिर्माण) क्षेत्र में भी पूंजीवादी विकास के पहले, उनके कच्चे माल एवं निर्मित माल (final product) का बाजार व्यापारियों के नियंत्रण में चला गया था। उसके बाद श्रमिक उत्पादक को उसके उत्पादन के साधन से बेदखल करना अगली आसान प्रक्रिया थी। कृषि क्षेत्र में भी इनपुट व उत्पादन जब वैश्विक पूंजी के बाजार के दायरे में आ जायेंगे, तो अगला कदम किसानों को बेदखल कर कारपोरेटी खेती का विकास ही होगा।

तीसरी बात, कारपोरेटी खेती की ओर बढ़ने का पहला कदम कान्ट्रैक्ट फार्मिंग है। प्रारंभ में उपज के कान्ट्रैक्ट की बात होगी, फिर कारपोरेट जगत इनपुट्स मुहैया करायेगा, जिसमें उसका एकाधिकार बनेगा और उसके बाद जमीन को सालाना लीज पर देने का चलन आयेगा, जिसमें किसान को एकमुश्त रकम मिल जायेगी। इन सब कदमों के बाद पूंजीवादी खेती में फैलाव आयेगा।

चौथी बात, पूंजीवादी बाजार को सरल बनाने के लिए अनाज के भंडारण एवं विक्रय पर कोई प्रतिबंध या नियंत्रण नहीं होगा। इससे खाद्य सुरक्षा के लक्ष्य को गहरा धक्का लगेगा। कारपोरेट व्यापारी को जहां और जब ज्यादा कीमत मिलेगी, तब वह विक्रय का स्थान और समय चुनेगा। मनुष्यनिर्मित अभावग्रस्त क्षेत्र (artificial deficite zone) भी बनते जायेंगे। भुखमरी एवं अकाल मानव निर्मित होंगे।

गांधी-150 का समापन करते हुए हमें एक नये संघर्ष का संकल्प लेना होगा ताकि कृषि को, खाद्य सुरक्षा को और खाद्य सम्प्रभुता को बचाया जा सके।

**–बिमल कुमार**

# दोराहे पर खड़ा सर्वोदय समाज

❑ भवानी शंकर कुसुम

*चुनाव अधिकारी, सर्व सेवा संघ*

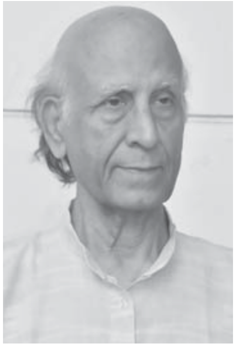

**दे**श का सर्वोदय समाज आज एक ऐसे दोराहे पर खड़ा है, जहाँ से अपनी जड़ों की तरफ लौटना उसके लिए असंभव नहीं, तो भी मुश्किल अवश्य है और यह भी तभी संभव है, जब कोई निस्पृह, सत्तानिरपेक्ष और निरहंकारी व्यक्ति शीर्ष पदाधिकारी का पद संभाले। अन्य संगठनों की तो मैं नहीं कह सकता, लेकिन सेवा संघ के लिए तो यही यथार्थ है. सर्व सेवा संघ के साथ जुड़ने के अपने कुछ वर्षों के अनुभव में मैंने यही देखा है. मैंने वह समय भी देखा है, आप में से भी अनेक लोगों ने देखा होगा, जब आचार्य राममूर्ति, नारायण देसाई, ठाकुरदास बंग और सिद्धराज ढड्ढा जैसे वरिष्ठ गांधीजन सर्व सेवा संघ के कर्णधार थे और उनके एक-एक वक्तव्य को पत्रकार और राजनैतिक जगत गंभीरता से लेता था। आज वह दृश्य अत्यंत विपरीत दिशा में परिवर्तित हो गया है. आज के सर्व सेवा संघ और सर्वोदय के अन्य संगठनों की भी कमोबेश यही स्थिति है, विचार और दर्शन तो केवल शीर्षक बन कर रह गया है. हम गांधी जी तथा उनके सहकर्मियों द्वारा सृजित संपत्तियों की रक्षा मात्र में अपनी शक्ति लगा रहे हैं और उनको भी ठीक से सुरक्षित नहीं रख पा रहे हैं। हम कहां से कहां आ गये हैं, यह गंभीर चिन्ता और चिन्तन का विषय है।

पिछले दिनों हुए घटनाक्रम में सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री महादेव विद्रोही को पदमुक्त कर श्री चंदन पाल को कार्यकारी अध्यक्ष बनाया गया, जो कि संघ में पहले कई बार हो चुकी ऐसी घटनाओं की पुनरावृत्ति तो थी और अवांछनीय भी नहीं थी, लेकिन श्री महादेव विद्रोही ने जो अविवेकपूर्ण और दुराग्रही रवैया अपनाया, वह सर्वोदय और गांधी विचार की अवधारणा के अत्यंत विपरीत था, जिसे सर्वोदय के इतिहास में हमेशा याद किया जायेगा। उनका **'मेरे अतिरिक्त सर्व सेवा संघ का अन्य कोई अध्यक्ष नहीं हो सकता'** वाली दम्भयुक्त सोच सर्व सेवा संघ के लिए तो चिन्ताजनक है ही, अपने आपको सर्वोदय और गांधी विचार का अनुयायी बताने वाले महादेव विद्रोही के लिए भी गंभीरतापूर्वक अपना आकलन करने का विषय है, यदि वे ऐसा करने के लिए तत्पर हों, तो?

यद्यपि पहले भी सर्व सेवा संघ के कई अध्यक्षों को हटाया गया है, लेकिन वे बिना किसी प्रतिरोध के स्वयं हट गये थे और उनके हटने या हटाये जाने की आवाज संघ से बाहर नहीं गयी, लेकिन श्री महादेव विद्रोही को हटाये जाने की चर्चा पहले भी और बाद में भी सर्वत्र चर्चा का विषय बनी। इसके लिए श्री महादेव विद्रोही लम्बे समय तक याद किये जायेंगे।

अभी भी महादेव विद्रोही और उनके कुछ समर्थक यह दावा कर रहे हैं कि उनको हटाया जाना **'उतावलापन था, जिसकी कोई आवश्यकता नहीं थी'**। इसलिए मुझे लगा कि सभी की जानकारी के लिए इसका स्पष्टीकरण दिया जाना चाहिए। 12-13 जनवरी 2020 को मुंबई में हुई सर्व सेवा संघ की कार्यसमिति की बैठक में दो विशेष निर्णय लिये गये थे—मुझे चुनाव अधिकारी बनाया गया तथा सेवाग्राम आश्रम के अध्यक्ष श्री टीआरएन प्रभु के विवाद के समाधान के लिए उनसे **बातचीत कर निर्णय लेने का अधिकार** श्री महादेव विद्रोही को दिया गया। लेकिन उन्होंने श्री प्रभु से बात किये बिना ही उन्हें पदमुक्त करने की घोषणा कर दी।

यद्यपि श्री महादेव विद्रोही की सर्व सेवा संघ में निरंकुशता लंबे समय से चली आ रही थी और उसे कार्यसमिति के सदस्यों और कार्यालय के कर्मचारियों सहित सभी चुपचाप सहन करते आ रहे थे, जो कि सर्वोदय जैसे संगठन में नहीं होना चाहिए। ऐसा व्यवहार सहन करने वाले सभी सर्व सेवा संघ की आज की दुर्दशा के लिए जिम्मेदार हैं। लेकिन जब श्री महादेव विद्रोही ने कार्यसमिति द्वारा दिये गये **'आपस में बातचीत कर निर्णय लेने के अधिकार'** का दुरुपयोग करते हुए सेवाग्राम आश्रम के अध्यक्ष श्री टीआरएन प्रभु को पदमुक्त किया, तो बवाल शुरू हो गया। धीरे-धीरे शुरू हुआ विरोध क्रमशः तीव्र रूप लेने लगा। यद्यपि इस बीच श्री टीआरएन प्रभु ने भी एक बार तो महादेव विद्रोही पर आरोप लगाते हुए समाचार पत्रों में साक्षात्कार के साथ-साथ त्याग-पत्र भी दे दिया, लेकिन शीघ्र ही उन्हें लगा कि उनसे भूल हो गयी है। जब महादेव विद्रोही बने रह सकते हैं तो वे क्यों नहीं, तो उन्होंने कुछ समय बाद अपना त्याग-पत्र वापस ले लिया।

जब इस संबंध में बाहर से श्री महादेव विद्रोही पर दबाव बढ़ने लगा, तो चुनाव अधिकारी के रूप में जिम्मेदार मानते हुए सर्वोदय के अंदर और बाहर के अनेक लोग मुझे पत्र लिखने लगे। लेकिन श्री महादेव विद्रोही यहीं नहीं रुके, उनका निरंकुश शासन लगातार चलता रहा, उन्होंने सुश्री आशा बोथरा को ट्रस्टी मंडल की सदस्यता से और श्री चंदन पाल को महामंत्री पद से हटा दिया। इन घटनाओं से क्षुब्ध होकर श्री रमेश पंकज ने स्वयं मंत्री पद से त्याग-पत्र दे दिया। इस पर मैंने तत्काल श्री महादेव विद्रोही को व्यक्तिगत रूप से इन लोगों को वापस लेने की सलाह दी, जिसको उन्होंने अनसुना कर दिया। तब मैंने कार्यसमिति के कुछ अन्य सदस्यों से बात कर श्री महादेव विद्रोही पर कार्यसमिति की बैठक बुलाने के लिए दबाव डाला।

8 जून, 2020 को जूम पर कार्यसमिति की बैठक बुलायी गयी, जिसमें सेवाग्राम आश्रम के प्रकरण के समाधान के लिए चर्चा करते हुए मेरे संयोजन में चार सदस्यों की एक कमेटी बनायी गयी, जिसमें मेरे सहित श्री जयवंत मठकर, श्री लक्ष्मीदास तथा श्री अरविन्द रेड्डी को लिया गया। कमेटी ने सभी तथ्यों की पड़ताल तथा सभी संबंधित व्यक्तियों से बात कर 15 दिन में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी। रिपोर्ट में जो सिफारिशें की गयी, उनमें श्री टीआरएन प्रभु, श्री चंदन पाल, सुश्री आशा बोथरा तथा श्री रमेश पंकज को वापस लेने का आग्रह मुख्य था, लेकिन श्री महादेव विद्रोही ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया।

श्री महादेव विद्रोही ने कार्यसमिति की सिफारिशों पर तो ध्यान नहीं ही दिया, बल्कि कार्यसमिति की राय जाने बिना और संविधान की परवाह किये बिना चार नयी नियुक्तियां और कर

## चंदन पाल सर्व सेवा संघ के कार्यकारी अध्यक्ष मनोनीत

23 सितंबर 2020 को गूगल मीट पर हुई सर्व सेवा संघ की कार्यसमिति की बैठक में सर्व सेवा संघ के नये अध्यक्ष का चुनाव होने तक चंदन पाल को सर्व सेवा संघ का कार्यकारी अध्यक्ष बनाया गया है। बैठक में सर्व सेवा संघ के पूर्व अध्यक्षों, प्रबंधक ट्रस्टी, सेवाग्राम आश्रम के अध्यक्ष, चुनाव अधिकारी तथा कार्यसमिति के कई सदस्यों सहित 26 लोगों ने भाग लिया।

सर्व सेवा संघ के प्रबंधक ट्रस्टी अशोक शरण तथा चुनाव अधिकारी भवानी शंकर कुसुम ने एक प्रेस विज्ञप्ति जारी करके बताया है कि कार्यसमिति की बैठक में सर्वानुमति से यह निर्णय लिया गया। प्रेस विज्ञप्ति के अनुसार महाराष्ट्र प्रदेश सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष शिवचरण ठाकुर ने सर्व सेवा संघ का अगला अधिवेशन वर्धा में कराये जाने के लिए निमंत्रण दिया, जिसे सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया। सरकार द्वारा कोरोना की स्थिति सामान्य होने की घोषणा तथा अधिवेशन करने की अनुमति देने के आधार पर दिसंबर 2020 में सर्व सेवा संघ का अधिवेशन आयोजित किया जायेगा, जिसमें नये अध्यक्ष का चुनाव होगा। इसी आशय की एक प्रेस विज्ञप्ति सर्व सेवा संघ की भूदान ग्रामदान समिति के संयोजक गौरांग महापात्र ने भी जारी की है। **–सर्वोदय जगत डेस्क**

दीं—श्री प्रशांत गूजर को कार्यालय मंत्री, श्री लक्ष्मण सिंह को महामंत्री, श्री आनन्द किशोर और चन्द्रकांत चौधरी को मंत्री बना दिया। इसमें जानबूझ कर की गयी निम्न त्रुटियां हैं-

1. श्री महादेव विद्रोही का अध्यक्षीय कार्यकाल 31 मार्च, 2020 को समाप्त हो गया और उन्हें 12-13 जनवरी, 2020 को मुंबई में हुई सर्व सेवा संघ की कार्यसमिति की बैठक में नये चुनाव होने तक कार्यकारी अध्यक्ष के रूप में कार्य करते रहने की स्वीकृति दी गयी थी। इसका अर्थ दैनंदिन कार्यों का संपादन मात्र था, नीतिगत फैसले लेना नहीं।

2. सर्व सेवा संघ के संविधान में महामंत्री का कोई प्रावधान नहीं है—धारा 10 ई में स्पष्ट लिखा है—संघ के अध्यक्ष आवश्यकतानुसार **कार्यसमिति के सदस्यों में से मंत्री, सहमंत्री आदि** एक या अधिक पदाधिकारी मनोनीत कर सकेंगे। इसलिए महामंत्री की नियुक्ति मूलतः ही गलत है।

3. कार्यालय मंत्री का सर्व सेवा संघ के संविधान में कोई प्रावधान नहीं है, इसलिए कार्यालय मंत्री की नियुक्ति भी पूरी तरह गलत है।

4. मंत्री, सहमंत्री आदि की नियुक्ति धारा 10 ई के अनुसार **कार्यसमिति के सदस्यों में से** ही की जा सकती है, जबकि श्री महादेव विद्रोही द्वारा नव नियुक्त महामंत्री और मंत्री श्री लक्ष्मण सिंह, श्री आनन्द किशोर और श्री चन्द्रकांत चौधरी कार्यसमिति के सदस्य ही नहीं हैं।

इससे स्पष्ट है कि उन्होंने संविधान विरोधी और अनैतिक होते हुए भी जानबूझ कर ये गलतियां की। इस पर मैंने चुनाव अधिकारी के रूप में उन्हें पत्र लिखकर ये नियुक्तियां निरस्त करने का आग्रह किया, लेकिन उन पर तो अध्यक्षीय अधिकारों का जूनून सवार था, सो **'ये अध्यक्ष का अधिकार है'** और **'आपको संगठन के कार्यों में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है'** जैसे शब्दों से जवाब देकर उन्होंने मुझे चुप कराने की कोशिश की, जैसा कि वे अब तक कार्यसमिति के सदस्यों और कार्यालय के कर्मचारियों को चुप कराते रहे हैं।

श्री महादेव विद्रोही ने सर्व सेवा संघ के कार्यालय पर अपना शिकंजा इस तरह कस लिया था कि वहां से कोई भी सूचना प्राप्त करना असंभव हो गया था। वहां के कर्मचारी इतने भयभीत थे कि वे मुझे कोई भी जानकारी देने से कतराने लगे। एक बाहरी व्यक्ति को कार्यालय में आने वाली और बाहर भेजी जाने वाली सभी डाक, ई-मेल आदि की निगरानी करने के लिए बिठा दिया, अर्थात् अघोषित सेंसरशिप लगा दी। इन सब गतिविधियों से मुझे लगा कि ऐसी स्थिति में निष्पक्ष चुनाव कराया जाना असंभव है, प्रबंधक ट्रस्टी श्री अशोक शरण का काम करना तो और भी मुश्किल हो गया। तब मैंने परिस्थिति की गंभीरता को समझते हुए मैंने 3.9.20 को श्री महादेव विद्रोही को एक निजी पत्र लिखा, जिसमें मैंने स्पष्ट रूप से उन्हें पद त्याग करने की सलाह दी। इस पत्र का अंतिम पैरा देखें—

**'मेरा आपको त्यागपत्र देने के लिए लिखना अनाधिकार चेष्टा हो सकती है, लेकिन यह एक निरपेक्ष और निःस्वार्थ भाव से आपको बिना मान सम्मान की हानि उठाये वर्तमान विकट स्थिति से उबारने की मित्रवत कोशिश है। मैं चाहता हूं कि आप न केवल अभी के आसन्न संकट से निष्कलंक होकर निकलें, बल्कि चुनाव के बाद भी सर्वोदय समाज में अच्छी स्थिति बनाये रख सकें। यह तभी संभव है, जब आप अभी त्यागपत्र देकर सम्मानपूर्वक अलग हो जायें। आपका सम्मान पूरी तरह बना रहे, यह हम अवश्य सुनिश्चित करेंगे। आप यथावत अग्रिम पंक्ति में बने रहेंगे। मुझे जब भी आवश्यकता हो, आप अपने साथ खड़ा पायेंगे, ऐसा विश्वास रख सकते हैं। मैं एक बार फिर अपना मित्रवत आग्रह दोहरा रहा हूं, पद के व्यामोह से निकलिये और तुरंत त्यागपत्र देकर अलग हो जाइये। जितनी शीघ्रता करेंगे, उतना हित में होगा, जितना विलंब करेंगे, उतनी ही हानि की आशंका बढ़ती जायेगी।'**

इसके साथ ही मैंने उनसे तत्काल कार्यसमिति की बैठक बुलाने का आग्रह किया। उन्होंने इसके प्रत्युत्तर में सब कुछ अपने अधिकार क्षेत्र में होने की बात दोहराते हुए टालने की कोशिश की। जब मुझे लगा कि वे बैठक बुलाने को तैयार नहीं हैं, तब मैंने प्रबंधक ट्रस्टी श्री अशोक शरण के साथ मिलकर 23 सितंबर को कार्यसमिति की बैठक बुलाने का निमंत्रण भेजा। यद्यपि यह निमंत्रण श्री महादेव विद्रोही को भी भेजा गया था, लेकिन यह उनको अपने अधिकार का उल्लंघन लगा। इस पर उनकी प्रतिक्रिया देखिये—

**'सर्व सेवा संघ की नियमावली के अनुसार अध्यक्ष या उनकी अनुमति से मंत्री ही कार्यसमिति की बैठक बुला सकते हैं। आपको बैठक बुलाने का कोई अधिकार नहीं है। सर्व सेवा संघ के लेटर हैड का उपयोग नहीं करें। आगे लेटर हैड का उपयोग आपराधिक कृत्य माना जायेगा। आपने जिन लोगों को पत्र लिखा है, उसमें से कई लोकसेवक नहीं हैं और कई का संबंध गांधी की हत्या से जुड़े संगठनों के साथ है। आपका ऐसा अधःपतन हो जायेगा इसकी कल्पना नहीं थी।'**

इससे यह प्रत्यक्ष अनुभव हुआ कि 6 वर्षों के सत्तासुख ने श्री महादेव विद्रोही में इतना अहंकार पैदा कर दिया है कि अपने अतिरिक्त उन्हें सभी अल्पबुद्धि, अयोग्य और गांधी-विचार विरोधी लगने लगे हैं, उनके इस क्रोधपूर्ण पत्र के उत्तर में मैंने उन्हें फिर समझाने का प्रयत्न किया-

**'संविधान में यह कहीं नहीं लिखा है कि कार्यसमिति की बैठक अध्यक्ष या मंत्री ही बुलायेगा। आपके द्वारा 31 मार्च 2020 के पहले और बाद में किये गये असंवैधानिक कृत्यों की लंबी सूची का उल्लेख यहां न तो संभव है, न प्रासंगिक। इसके बावजूद आपसे कार्यसमिति की बैठक बुलाने का हमने कई बार अनुरोध किया था। जब आपने अपने अहंकारवश बैठक नहीं बुलाई, तब हमें बुलानी पड़ी। इसमें संविधान का कतई उल्लंघन नहीं है। फिर संविधान की परवाह तो उसे होती है, जिसने कभी उसका पालन किया हो। प्रभु, आशा बोथरा और चंदन पाल को हटाते समय तथा उदारतापूर्वक अथवा अपने स्वार्थवश किसी को कार्यालय मंत्री, किसी को महामंत्री और मंत्री बनाते समय आपने कब संविधान का पालन किया, कभी सोचा है?'**

**आपने सर्व सेवा संघ के लेटरहैड के उपयोग को हमारा आपराधिक कृत्य बताया है। आपके भाषा और शब्द ज्ञान पर मुझे आश्चर्य है। आपराधिक कृत्य चोरी करना होता है। सर्व सेवा संघ आपकी दुकान नहीं है, जहां से हमने लेटरहैड चुराया हो। यह सार्वजनिक संगठन है, जिसके प्रबंधक ट्रस्टी और चुनाव अधिकारी को उसके लेटरहैड का उपयोग करने का पूर्ण अधिकार है।'**

इस बीच श्री महादेव विद्रोही का निरंकुश अभियान जारी रहा और उन्होंने बिना कार्यसमिति और चुनाव अधिकारी से सलाह किये 5-6 दिसंबर को फर्रुखाबाद में सर्व सेवा संघ का अधिवेशन आयोजित किये जाने की घोषणा कर दी। यह आयोजन एक ऐसे व्यक्ति के कहने पर किया गया, जिसे हाल ही में श्री महादेव विद्रोही ने असंवैधानिक तरीके से सर्व सेवा संघ का महामंत्री मनोनीत किया था, जो कि कार्यसमिति के सदस्य भी नहीं हैं।

इन सब परिस्थितियों को देखते हुए यह स्पष्ट हो गया था कि श्री महादेव विद्रोही के रहते निष्पक्ष चुनाव कराया जाना असंभव है। इन आशंकाओं को लक्षित कर कार्यसमिति के अधिकांश सदस्यों और प्रदेशाध्यक्षों ने मुझसे शीघ्रातिशीघ्र कार्यसमिति की बैठक बुलाने का आग्रह किया। अंततः मैंने प्रबंधक ट्रस्टी श्री अशोक शरण के सहयोग से 23 सितंबर, 2020 को गूगल पर कार्यसमिति की बैठक बुलाने का निर्णय किया।

23 सितंबर, 2020 को प्रातः 11 बजे आयोजित इस बैठक में मूल कार्यसमिति (श्री महादेव विद्रोही द्वारा 2017 में घोषित) के 12 में से 10 सदस्य, 6 प्रदेशों के अध्यक्ष, कई समितियों के अध्यक्ष, संयोजक तथा तीन पूर्व अध्यक्षों सहित अनेक वरिष्ठ लोकसेवक (कुल 26 लोग) उपस्थित थे। इससे यह सिद्ध होता है कि बैठक कितनी महत्त्वपूर्ण थी। बैठक में समूचे घटनाक्रम को सुनने के बाद सभी ने एक स्वर में श्री महादेव विद्रोही को तत्काल अध्यक्ष पद से मुक्त करने की मांग की, जिसे सर्वानुमति से स्वीकार किया गया। फिर चुनाव होने तक किसी को कार्यकारी अध्यक्ष बनाये जाने का प्रश्न उठा। इस पर श्री आदित्य पटनायक ने श्री चंदन पाल का नाम रखा, जिसे सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया। अधिवेशन की चर्चा चलने पर महाराष्ट्र प्रदेश सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष श्री शिवचरण ठाकुर ने वर्धा में अधिवेशन का प्रस्ताव दिया, जिसके आतिथ्य की जिम्मेदारी उन्होंने ली। अधिवेशन की तिथियों की घोषणा सरकार द्वारा कोरोना की सामान्य स्थिति घोषित किये जाने पर की जायेगी। इस प्रकार यह घटनाक्रम इस परिणति तक पहुंचा।

कार्यकारी अध्यक्ष चुने जाने के बाद श्री चंदन पाल सर्व सेवा संघ कार्यालय पहुंचते, उससे पहले ही श्री महादेव विद्रोही वहां पहुंच गये, लेकिन उनके साथ वर्धा या महाराष्ट्र का एक भी लोकसेवक या सर्वोदय कार्यकर्ता नहीं था और वे कांग्रेस के कुछ स्थानीय लोगों को साथ लेकर आये, लेकिन विपरीत परिस्थिति को भांप कर चले गये।

इस पूरे घटनाक्रम में कौन-सा उतावलापन या संविधान अथवा सर्वोदय विचार विरोधी कृत्य दिखायी देता है, आप ही सोचें। हमने जो किया, वह सर्वोदय विचार और विखंडन के कगार पर खड़े सर्व सेवा संघ के संगठन को बचाने तथा नये अध्यक्ष का निष्पक्ष और निर्विघ्न चुनाव सुनिश्चित करने के लिए किया, जो श्री महादेव विद्रोही के रहते संभव नहीं था। यह आप ऊपर वर्णित घटनाक्रम से बखूबी समझ सकते हैं।

सर्व सेवा संघ को आसन्न संकट से बचाने का मात्र प्रारम्भिक चरण पूरा हुआ है, संगठन के परिष्कार और सर्वोदय विचार के पुनर्प्रतिष्ठापन की चुनौती अभी सामने है। नये चुनाव में कौन दायित्व संभालेगा, संविधान, संगठन, गांधी दर्शन और सर्वोदय विचार कैसे प्रतिष्ठित होगा? इन शेष प्रश्नों का उत्तर भविष्य के गर्भ में है, जिसके लिए हम सब उत्तरदायी हैं। ❑

## सर्व सेवा संघ अधिवेशन के बारे में

आपको पता होगा कि 23 सितंबर 2020 को सर्व सेवा संघ की कार्यसमिति की बैठक गूगल मीट पर हुई। उसमें मुझे कार्यकारी अध्यक्ष मनोनीत किया गया है। मैंने दिनांक 26 सितंबर 2020 को कार्यकारी अध्यक्ष के रूप में पदभार संभाल लिया है। सर्व सेवा संघ के बुनियादी काम को आगे ले जाने के लिए मुझे आपकी मदद की आवश्यकता है।

सर्व सेवा संघ की कार्यसमिति में तय हुआ कि संघ का अगला अधिवेशन और अध्यक्ष का चुनाव महाराष्ट्र प्रदेश सर्वोदय मंडल के आमंत्रण पर सेवाग्राम, वर्धा (महाराष्ट्र) में स्थिति सामान्य होने पर किया जायेगा। 5-6 दिसंबर 2020 को फर्रूखाबाद (उत्तर प्रदेश) में हमारा कोई अधिवेशन या चुनाव नहीं होगा। इसलिए आपको यह जानकारी दी जा रही है कि कोई भी लोकसेवक या सर्वोदय मंडल के कार्यकर्ता फर्रूखाबाद (उत्तर प्रदेश) जाने की पीड़ा न उठायें। सही समय पर चुनाव और अधिवेशन की जानकारी आपको भेजी जायेगी।

आपसे यह निवेदन है कि 2 अक्टूबर गांधी जयंती के अवसर पर अपने-अपने क्षेत्र में मर्यादा के साथ कार्यक्रम किया जाय, जिसमें सर्वधर्म प्रार्थना और गांधी विचार पर चर्चा के साथ-साथ श्रमदान, सफाई, वृक्षारोपण आदि कार्यक्रम किये जायें। कार्यक्रम में ज्यादा-से-ज्यादा युवाओं, छात्राओं, महिलाओं, दलितों, आदिवासियों तथा बुद्धिजीवियों को शामिल किया जाय। कार्यक्रम की रिपोर्ट, अखबार की कॉपी, फोटो आदि सेवाग्राम कार्यालय को भेजने की कृपा करें ताकि मुख्यालय के रिकार्ड में आपके कार्यक्रम शामिल किये जा सकें।

**–चंदन पाल**

*कार्यकारी अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ*

## नये कार्यकारी अध्यक्ष

# चंदन पाल : एक परिचय

सर्व सेवा संघ के मनोनीत कार्यकारी अध्यक्ष चंदन पाल वरिष्ठ सर्वोदय नेता हैं। पश्चिम बंगाल के निवासी 71 वर्षीय चंदन पाल 1964 में विद्यार्थी जीवन से ही गांधियन आंदोलनों से जुड़ने लगे थे। उन्हें आचार्य विनोबा भावे, धीरेन्द्र मजूमदार, दादा धर्माधिकारी, लोकनायक जयप्रकाश नारायण, सिद्धराज ढड्ढा, प्रो. ठाकुरदास बंग, मनमोहन चौधरी और नारायण देसाई के मार्गदर्शन में काम करने का अवसर मिला। तब से लेकर ड्डब तक अपने 56 वर्षों के सार्वजनिक जीवन में वे गांधी विचार और कार्य के प्रति निरंतर समर्पित निष्ठा से लगे रहे हैं। वे तरुण शांति सेना और छात्र युवा संघर्ष वाहिनी के प्रमुख साथियों में से हैं। विनोबा के साथ भूदान ग्रामदान आंदोलन तथा जेपी के साथ संपूर्ण क्रांति आंदोलन के भी वे सक्रिय कार्यकर्ता रहे हैं।

सातवें दशक के अंतिम वर्षों में नक्सलवादी आंदोलनों के दौर में उन्होंने बंगाल में विभिन्न शांति मार्चों का नेतृत्व किया। उसके बाद से वे सर्वोदय आंदोलनों से जुड़ते चले गये। 1971 में बांग्लादेश मुक्ति संघर्ष के दौरान वे कोलकाता के साल्ट लेक रिफ्यूजी कैम्प के स्वच्छता कार्यक्रमों में सक्रिय रहे। 1978 में पश्चिम बंगाल में आयी बाढ़ के दौरान उन्होंने पश्चिम बंगाल गांधी शांति प्रतिष्ठान की ओर से राहत और पुनर्वास के काम में सक्रिय भागीदारी की और विभिन्न ग्रामीण संगठनों के विकास के काम से नौजवानों को जोड़ा। उन्होंने 1991 में उड़ीसा में आये सुपर साइक्लोन से पीड़ित लोगों की भी सेवा की। 2004 में आयी सुनामी के बाद वे तमिलनाडु, केरल और अंडमान नीकोबार द्वीपसमूह में मछुआरों के बचाव व राहत के काम में जुटे। वहां वे लगभग एक वर्ष रहे। नंदिग्राम आंदोलन के दौरान शांति की स्थापना के लिए उन्होंने अनेक शांति मार्च और कार्यक्रम आयोजित किये तथा सत्याग्रह भी किया।

2010 में उन्होंने पश्चिम मिदनापुर के नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में युवाओं को मुख्य धारा से जोड़ा। 2012 में असम के बोडो प्रभावित जिलों में सांप्रदायिक सौहार्द और शांति की स्थापना के लिए वे कोकराझार में थे। बोडो जनजातियों और मुसलमानों के संघर्ष में उन दिनों लगभग 4 लाख लोग शरणार्थी शिविरों में थे, जहां हजारों घर जला दिये गये थे। 2012 से 2017 तक वे विभिन्न क्षेत्रों में असम शांति यात्रा के माध्यम से शांति स्थापना का काम करते रहे। 12 राज्यों से लगभग 52 कार्यकर्ताओं की टीम बनाकर उन्होंने असम के विभिन्न जनजातीय समूहों के बीच शांति और भाईचारे के लिए उल्लेखनीय प्रयत्न किये, शांति मार्च निकाले, बैठकें कीं तथा कबीर, नानक, बुद्ध, मुहम्मद साहब, जीसस क्राइस्ट, चैतन्य, महावीर और गांधी के संदेशों का प्रसार किया। इन समुदायों के बीच भाईचारे की स्थापना के लिए उन्होंने कोकराझार में गांधी शांति संघ की स्थापना भी की।

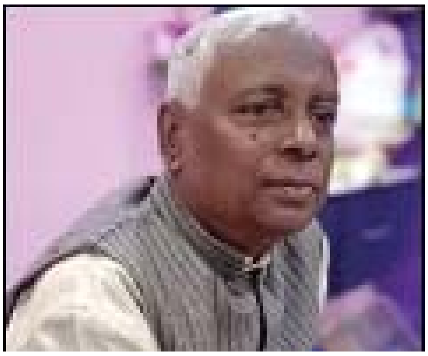

इस दौरान 3 सितंबर से 22 अक्टूबर 2016 के बीच उन्होंने कोकराझार से जम्मूकश्मीर तक एक शांति सद्भावना साइकिल यात्रा का आयोजन किया। आपसी भाईचारे और शांति की स्थापना के लिए की गयी इस यात्रा ने 9 राज्यों को कवर करते हुए साइकिल से लगभग 2900 किलोमीटर की दूरी तय की। इस साइकिल यात्रा में उनके साथ युवकों, युवतियों और विद्यार्थियों के समूह ने यात्रा की। शांति ओर सांप्रदायिक सौहार्द, नौजवानों के साथ काम, आर्गेनिक कृषि, वर्षाजल संरक्षण आदि प्रारंभ से ही उनकी रुचि के कार्यक्षेत्र रहे हैं। वर्षा जल संरक्षण के लिए उन्होंने 'तलाव से बनाव' नामक एक मॉडल भी विकसित किया, जो एक परिवार को स्वावलंबी बनाने में मदद करता है।

**विदेश प्रवास :** 1982 में उन्होंने नीदरलैंड, पश्चिम जर्मनी और डेन्मार्क की यात्रा की। यह यात्रा उन देशों की वयस्क शिक्षा पद्धति के अध्ययन के लिए की गयी थी। इसके अलावा वे रूस, पोलैण्ड, नेपाल, भूटान व बांग्लादेश की यात्रा भी कर चुके हैं।

**साहित्यिक कार्य :** चंदन पाल ने अपने सार्वजनिक जीवन के अनुभवों से प्रेरित होकर कुछ पुस्तकों की रचना भी की है। शिविर संचालन पद्धति, गांधी प्रश्नोत्तरी तथा Exploring Gandhian Peace Iniciative Realms of Kokarajhar, Assam. आदि उनकी लिखी पुस्तकें हैं। इसके अलावा Alor Disari Swami Vivekanand तथा Rabindranath : Kichhu Prasanga, Kichhu Bhabna पुस्तकों का संपादन भी किया। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, साप्ताहिकों और जर्नल्स में भी उनके समसामयिक आलेख प्रकाशित होते रहे हैं।

**संस्थाएं और संगठन :** अपने सुदीर्घ सार्वजनिक जीवन में चंदन पाल ने विभिन्न संस्थाओं व संगठनों के साथ विभिन्न दायित्वों का निर्वाह किया है। सर्व सेवा संघ का कार्यकारी अध्यक्ष मनोनीत किये जाने से पहले वे सर्व सेवा संघ के महामंत्री रहे। इसके पहले वे पश्चिम बंगाल गांधी शांति प्रतिष्ठान के सेक्रेटरी, साउथ एशियन फर्टेनिटी, दिल्ली के सदस्य, गांधी शोध अकादमी, तिरुपति के सदस्य सचिव, रूरल डेवलपमेंट कंसोर्टियम, कोलकाता के ट्रेजरार, वनवासी सेवा आश्रम गोविन्दपुर तथा फोरम ऑफ वालन्टरी आर्गनाइजेशन्स, प. बंगाल के उपाध्यक्ष, ग्राम नियोजन केन्द्र, गाजियाबाद के सदस्य, अभय आश्रम बलरामपुर तथा श्रम विद्यापीठ बेलडा के एक्ज्यूटिव कमेटी मेम्बर रह चुके हैं।

**पुरस्कार व सम्मान :** उनकी सार्वजनिक सेवाओं के लिए अलग-अलग समय पर विभिन्न संस्थाओं और मंचों की तरफ से उन्हें सम्मानित किया गया। 2014 में उन्हें जमनाबेन लोकसेवक अवार्ड मिला। 2015 में उन्हें श्री पद्मावती महिला विश्वविद्यालय, एकेडमी ऑफ गांधियन स्टडीज और तिरुपति गांधी पीस सेंटर की तरफ से संयुक्त रूप से सम्मानित किया गया। इसके अलावा उन्हें प्रणति घोष व सुरेश शिशिर स्मारक समाज सेवा पुरस्कार, बीटीएम मातृभूमि अवार्ड-2015, मदर इंडिया अवार्ड, राइजिंग स्टार ऑफ एशिया अवार्ड तथा देश स्नेही अवार्ड से भी पुरस्कृत किया जा चुका है। 2020 में उन्हें गांधियन सोसाइटी और गुजरात विद्यापीठ द्वारा भी संयुक्त रूप से सम्मानित किया गया। ❑

# गांधी का करुण रस

–❑ विद्यानिवास मिश्र

*विद्यानिवास मिश्र हिन्दी साहित्य के उद्भट विद्वान थे। अपने विशाल रचना संसार में अपनी ललित व प्रांजल शैली में विभिन्न विषयों के माध्यम से उन्होंने विभिन्न जीवन मूल्यों की विशद विवेचना की है। प्रस्तुत आलेख में उन्होंने गांधी के भीतर समाहित करुणा के तत्व की गहन खोजबीन और तलाश की है। कहना न होगा कि 'मेरा जीवन ही मेरा संदेश है' की उद्घोषणा करने वाले गांधी के जीवन के विभिन्न प्रसंगों से करुणा तत्व का अन्वेषण करके लेखक खुद भी आप्लावित होता है और पाठक को भी आप्लावित करता है।* **–सं.**

**इ**धर गांधी की पीड़ा के विषय मुझे बहुत मथते रहे हैं। शिक्षा के प्रश्न पर, संयत जीवन के प्रश्न पर, स्वावलंबन की आवश्यकता के प्रश्न पर और जीवन को धारण करने वाले विशाल धर्म के प्रश्न पर। गांधीजी ने आज के जीवन-मरण के प्रश्नों पर एक शताब्दी पूर्व सोचा, पर वे अनसुने रह गए। गांधीजी को इसका बड़ा मलाल था। वे कहते थे—मैं दो व्यक्तियों को नहीं समझ पाया-जिन्ना को और अपने बड़े बेटे हरिलाल को। दोनों महत्वाकांक्षा की बलिवेदी पर चढ़ गए और अपने जीवन की सही दिशा से ठीक उल्टे मुड़ गए।'' दोनों गांधी के पथ के अनुगामी थे, दोनों प्रतिगामी हो गए। पर हरिलाल के जीवन के बहाव का गांधी पर बहुत गहरा असर पड़ा।

मैं उस युगद्रष्टा के विषाद को आज के आलोक में समझना चाहता हूँ। मुझसे कभी रामचंद्र गांधी ने कहा था कि गांधी का आना युधिष्ठिर की वापसी है। इसके प्रत्युत्तर में मैंने कहा था कि गांधीजी का आना अर्जुन की वापसी है। अर्जुन की तरह बराबर प्रश्न छेड़ने वाले, अपने भीतर और बाहर व्याप्त विराट देवता से उत्तर माँगने वाले और जीवन को प्रयोगशाला बनाने के लिए सदैव तैयार। आज के धुंध भरे वातावरण में इन प्रश्नों से टकराना बड़े जोखिम का काम है। लोग ऐसे प्रश्नों से कतराना चाहते हैं, जीवन की सुविधाएं छूटने से डरते हैं, क्योंकि बड़े प्रश्नों से टकराने पर सुविधाएँ अपने आप खिसकने लगती हैं। मैं यह जोखिम उन लोगों की ओर से उठा रहा हूँ, जो स्वाधीनता के प्रसाद का चूरा भी नहीं पा सके और चरणामृत भी उन तक पहुँचते पहुँचते टोंटी का जल हो गया। वे लोग साक्षर हुए तो अधूरे, सफल भी हुए तो कई तरह से विपन्न। उनकी पद्धति जिस आधार पर सहस्राब्दियों तक टिकी रही, वे आधार आज भी हैं, कुछ उघाड़ हो जाने के कारण कमजोर जरूर हो गए हैं, पर उन आधारों की बात गांधी के व्याज से न की जाये तो किस व्याज से की जाये।

गांधी का चित्र नोट पर छपता है। हर शहर में उनके नाम से एक सड़क है। दो आश्रम भी उनके हैं-एक वर्धा में, एक साबरमती के किनारे अहमदाबाद में। उनके नाम से तीन-तीन विश्वविद्यालय हैं। लेकिन जहाँ तक मुझे ज्ञात है, उन्होंने आजाद हिंदुस्तान की व्यवस्था की जो रूपरेखा बनाकर स्वाधीनता-प्राप्ति के कई दशक पहले प्रकाशित की थी, न केवल उसकी चर्चा नहीं हुई, वह कहीं पाठ्यक्रम में भी शामिल नहीं है। वैसे गांधी अध्ययन केंद्र भी हैं, शायद हर विश्वविद्यालय में होंगे; पर गांधीजी के चिंतन में जो नक्शा हिंदुस्तान का बना, वह कहीं ताक पर रख दिया गया है। इससे बड़ी त्रासदी क्या होगी! देश के विभाजन के बाद एकता का स्वप्न टूटने से नैराश्य के बावजूद गांधीजी सपने सँजो रहे थे कि किसी दिन यह अस्वाभाविक विभाजन जुड़ाव में परिवर्तित होगा, इसीलिए वे अपनी लोकप्रियता को दाँव पर चढ़ाकर हमारी जो देनदारी पाकिस्तान पर थी, उसे चुकता करवाने पर अड़ गए, जिस पर बड़ा आक्रोश हुआ। अपने जीवन के अंतिम वर्ष में वे बिलकुल अकेले पड़ गए थे। उन्होंने एकाधिक बार प्रार्थना सभा में कहा, 'लोग मुझे पागल समझते हैं। हाँ, मैं पागल हो गया हूँ।' गांधीजी कभी इतने अकेले नहीं थे। उनके पास दुर्दम्य आस्तिकता का संबल था और अंततः यह आस्तिकता भी स्वतंत्र भारत में करुणांत ही सिद्ध हुई। गांधीजी का समग्र विचार गांधीजी के साथ ही विदा हो गया। गांधीजी नामशेष रह गए।

उनके विचार यदि रहे भी तो निराकार में रहे। इस त्रासदी पर रचनात्मक चिंतन भी बहुत कम हुआ। जहाँ तक मुझे स्मरण है, उनकी मृत्यु पर सबसे सार्थक शोक-गीत स्वर्गीय बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने लिखा था, जिसमें उन्होंने गांधी की मृत्यु पर नहीं, गांधी की हत्या करने की स्थिति पर, हत्या जिस कारण हुई उस कारण पर, मानवता की मृत्यु पर शोक व्यक्त किया। यह मानवता क्या थी, इसके निहितार्थ क्या थे, इस पर एक पीढ़ी गुजरी, दो पीढ़ियाँ, गुजरीं, तीसरी, चौथी, पांचवीं पीढ़ी सामने आ गई लेकिन कोई जुंबिश नहीं हुई।

अभी-अभी मुझे दिनकर जोशी की पुस्तक का हिंदी अनुवाद 'उजाले की परछाईं' पढ़ने को मिला। वैसे तो यह जीवन-कथा गांधीजी के बड़े पुत्र हरिलाल गांधी की है, जो गांधीजी के अत्यंत प्रिय थे और उनके दक्षिण अफ्रीका के अभियान को आगे बढ़ाने के कारण एक दिन बगावत पर उतर आए। भंयकर आकर्षण-विकर्षण के शिकार हुए। वे अपने पैरों पर खड़े होने की कोशिश में लड़खड़ाते ही चले गए। पर गांधीजी के आदर्श उनके सिर पर सवार रहे। वे परिवारी बनना चाहते थे, लेकिन परिवार-विहीन होकर बेनाम मरे। गांधीजी के जाने के लगभग चार-पाँच महीने बाद। उनके लिए उनकी माँ जीवन भर बिलखती रहीं। गांधीजी के मन में भी अंतर्द्वंद्व रहा कि मुझसे क्या गलती हुई। उन्होंने तो अपने को एक बड़े परिवार का कर्ता माना, इसलिए अपने बेटे की उत्कट इच्छा होते हुए भी, किसी दूसरे का मुक्त निमंत्रण होते हुए भी कि आपके किसी एक लड़के को लंदन में पढ़ाना चाहता हूँ, उन्होंने

पहले तो एक भतीजे को भेजा, जो बीच में ही लौट आया, फिर एक पारसी सज्जन को भेजा। गांधीजी सोचते थे कि जो कठिन तप की शिक्षा उनके आश्रम में दी गई है, उससे बड़ी शिक्षा कोई नहीं है। हरिलाल गांधी अपनी कल्पना की शिक्षा के लिए तरसते ही रह गए। वे यह शिक्षा अपने लिए नहीं, अपने परिवार के लिए पाना चाहते थे। परिवार को आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबी बनाने के लिए प्राप्त करना चाहते थे। गांधीजी के मन में अवश्य अंतर्द्वंद्व रहा होगा और हरिलाल गांधी के लिए करुणा भी रही होगी। उन्होंने हरिलाल गांधी को दक्षिण अफ्रीका से विदा देते समय संबोधित करके कहा भी था-मुझसे कोई गलती हुई हो, तो क्षमा करना।

ऐसा ही अंतर्द्वंद्व राम के मन में भी हुआ होगा, जब उन्होंने लोकापवाद की अधिक चिंता की और सीता को निर्वासित किया। हरिलाल गांधी सीता तो नहीं थे; पर जीवन में इतने अतिचारों के बावजूद वे अनगढ़ आजाद हीरा तो थे ही। नहीं तो माँ और पिता दोनों के अंतिम दर्शन करने वे दूर-दराज से खिंचे न आते। उनसे जो भी गलतियाँ हुईं, उन गलतियों पर आज विचार होना आवश्यक है। गांधीजी हिंदुस्तान के आम आदमी के ही दुःख से नहीं, किसी भी पराधीन प्राणी के दुःख से द्रवित हो जाते थे। उनकी मानवता समस्त जड़-चेतन को समेटकर क्रियाशील होती थी; पर वे अपने पुत्र के प्रति इतने अकरुण क्यों हुए ? यह सोचना कि उन्हें अपनी छवि की चिंता थी, सरासर अन्याय होगा। गांधीजी अपना सर्वस्व उत्सर्ग करने वाली बा के प्रति भी कई बार अकरुण हुए। पर बा के लिए उनके मन में अगाध प्यार भी था। बा के जाने के बाद गांधीजी की आधी से अधिक ऊर्जा चली गई, नहीं तो गांधीजी ने विभाजन होने नहीं दिया होता, अकेले उनमें इतना दम था। गांधीजी को अपनी छवि की चिंता नहीं थी, ऐसे देश की छवि की चिंता थी जो देश के बाहर के बारे में भी सोचने का अभ्यासी रहा। जो गांधी एक बकरी को परिवार का अंग बना सकते थे, वे गांधी अपने लड़के के बारे में यह उद्घोषणा करें कि यह मेरा लड़का नहीं रहा, इससे मेरा कोई संबंध नहीं है, तो इस अंतर्द्वंद्व को समझने की जरूरत है।

यहीं पर गांधीजी का जीवन उस सनातन प्रश्न को छेड़ता है कि कितनी दूर तक लोक की और कितनी दूर तक अपने निजी संबंधों की चिंता करनी चाहिए। क्या इन दोनों में विरोध है? यदि है तो क्या उसका समाधान नहीं है? यह प्रश्न आज भी किसी भी संवेदनशील आदमी को उतना ही सालेगा, जितना गांधीजी को सालता रहा होगा। रवींद्र केड़ेकर ने गांधीजी के संबंध में एक लंबी चर्चा काका कालेलकर से की। वह चर्चा गांधीजी के अंतर्विरोधों को समझने में आज भी बड़ी उपयोगी है। आनंद कुमार स्वामी ने अपनी पुस्तक 'आर्ट और स्वदेशी' में बहुत सारे मर्मभेदी प्रश्न छेड़े। मैंने पृथ्वी सिंह आजाद से, जो गांधीजी के आश्रम में कुछ दिनों आश्रय लिये हुए थे, बहुत सी कथाएँ सुनी थीं। उनसे मुझे लगा था कि विग्रह का अतिरेक कभी-कभी आसक्ति को उकसाता है। ऐसा क्यों होता है ? गांधीजी ने 'गीता' पढ़ी ही नहीं थी, गुनी भी थी और श्रीकृष्ण के निष्काम योग के वे साधक भी थे।

मैंने उसके दोनों आश्रमों को उनके जाने के बाद देखा। हृदयकुंज को भी, सेवाग्राम को भी। दोनों में ऐसा तो लगता है कि गांधीजी कहीं उपस्थित हैं, पर बिहँसते हुए गांधी नहीं, थके-हारे गांधी वहाँ उपस्थित हैं। सबसे अलग, बिछुड़े हुए, धीरे-धीरे पहाड़ की ओर चढ़ते युधिष्ठिर की तरह गांधीजी चल रहे हैं, सब छूटते जा रहे हैं। युधिष्ठिर ने भी धर्म की लड़ाई लड़ी, अन्याय न सहने की लड़ाई लड़ी, पर लड़ाई जीत जाने पर उन्हें विषाद ने घेरा। गांधीजी ने स्वाधीनता की लड़ाई लड़ी। भारत के स्वाधीन हो जाने पर उन्हें विषाद ने घेरा कि मैं इस स्वतंत्र भारत में कुछ दिशा-निर्देश नहीं दे सकता। मैं अप्रासंगिक हो गया हूँ। क्या अपने जीवन को एक निरन्तर मंथन बनाने वाला गांधी जैसा आदमी अप्रासंगिक हो सकता है। केवल भारत के लिए नहीं, विश्वमात्र के लिए? पशु बल के आगे भी हार न मानने वाला एक व्यक्ति स्वजनों से ऐसे हार मानने के लिए विवश होगा? मुझे तो ऐसा लगता है कि हरिलाल गांधी का जीवन हरिलाल की त्रासदी नहीं, गांधीजी के जीवन की त्रासदी है और शायद यह भारत की ही त्रासदी है। भारत जीतकर हारता रहा है और हारकर जीतता रहा है। इसकी संस्कृति की बुनावट में कहीं गहरी करुणा के बीज हैं। भारत में अद्भुत क्षमता है त्याग की, और उसी मात्रा में उसमें लोभ की प्रबलता भी है। यह लोभ कभी-कभी धर्म का लोभ होता है और कभी प्रतिष्ठा का लोभ होता है। यह सकारात्मक लोभ हमें हमेशा मारता रहता है। चाहे जौहर के रूप में मारता रहा हो, चाहे पंचशील के उपदेष्टा के रूप में। ऐसे जटिल संरचना वाले भारत के विकास के बारे में कोई भी कल्पना करें, उसमें से गांधी को अलग नहीं कर सकते, युधिष्ठिर को अलग नहीं कर सकते, राम और कृष्ण को अलग नहीं कर सकते, नवजात बच्चे के साथ सोई हुई यशोधरा को तजने वाले महानिष्क्रमण के लिए प्रस्थित बुद्ध को अलग नहीं कर सकते। तितिक्षा का पाठ पढ़ाने वाले उन महावीर के चिंतन को अलग नहीं कर सकते। हिंदी में गिरिराज किशोर ने गांधीजी के दक्षिण अफ्रीका में किए गए अभियान का लेखा-जोखा 'पहला गिरमिटिया' के रूप में प्रस्तुत किया है। पर दक्षिण अफ्रीका तो गांधीजी की प्राथमिक शाला था। उसके बाद उनके सारे प्रयोग भारत में हुए। उन्होंने कोयले को ही अपनी ऊर्जा के ताप से हीरा बनाया और उनका अपना हीरा कोयला बन गया। हमारे देश ने या तो उन्हें महिमा के आलोक में छिपा रखा है या फिर उनको प्रतिगामी, सर्वहारा का शत्रु, पूँजीवाद का हथियार आदि एक-से-एक लफ्फाजी भरे विशेषणों से घेर रखा है। गांधीजी दोनों ही नहीं थे, वे नर के भीतर नारायण की बेसंभाल व्यथा थे।

काश वह व्यथा आज देश के हृदय पर अंकित होती तो देश के चित्त का ऐसा संस्कार होता कि सारी खामियों के बावजूद हम सही माने में स्वाधीन होने के लिए खड़े हो जाते। मन में इतना विश्वास अवश्य है कि एक-न-एक दिन गांधी की वह विराट व्यथा उसी तरह हमारे हृदय में करुणा की रसधार बनेगी, जिस तरह 'महाभारत' में युधिष्ठिर का विषाद बना, श्रीकृष्ण का अकेलापन बना; राम की सीता के बिना जीवन की व्यर्थता का दुःख बना। तभी देश का चित्त पखारा जाएगा और तभी शुद्ध चित्त से देश के विकास की चिंता होगी। ❑

# कृषि कानून बिलों के पास हो जाने के बाद कुछ सवाल

❑ विजय शंकर सिंह

**नो**टबन्दी, जीएसटी, तालाबंदी, के बाद अब कृषि कानून चौथा मास्टरस्ट्रोक है। नोटबन्दी था, मौद्रिक सुधार था, जीएसटी कर सुधार था, तालाबंदी महामारी से बचाव के लिए और यह कृषि मुक्ति कानून किसानों को मुक्त करने के लिए लाया गया है। अधिकतर मास्टरस्ट्रोक सुधार ही कहे जाते हैं, पर सुधार किसका होता है और सुधरता कौन है, यह सुधारक कभी नही बताता। वह अगले सुधार में लग जाता है।

अब खेत की मेड़ पर, आमने सामने बैठ कर, सरकार के कानून द्वारा मिले अधिकार सुख की मादकता से परिपूर्ण होकर, किसान, कॉरपोरेट से कॉन्ट्रैक्ट फार्मिंग की सौदेबाजी करेगा। एक कानून ने कॉरपोरेट और पांच बीघा के किसान को एक ही सफ़ में लाकर खड़ा कर दिया है, अब देखना है कि किसान की साफगोई जीतती है या कॉरपोरेट का शातिर प्रबंधकीय कौशल।

किसान और कॉरपोरेट की शिखर वार्ता के बीच, अब सरकार कहीं नहीं है। उसने बाजार खोल दिये। व्यापारी, कॉरपोरेट और जिसके पास एक अदद पैन कार्ड है, उन्हें यह अख्तियार दे दिए कि वे भी एक लोडर लें और कही भी जाकर किसी भी खेत से अनाज खरीद लें। दाम, बेचने वाले किसान और खरीदने वाले पैन कार्ड धारक तय करेंगे। सरकार को चैन से आराम करने दीजिए। अब वह भले ही अनाज के दाम तय कर दे, पर वह उस कीमत पर या उससे कम कीमत पर अनाज खरीदने के लिए किसी पैन कार्ड धारक को बाध्य करने से रही। यह अलग बात है कि अन्नदाता का खिताब बरकरार रहेगा।

कानून के पक्ष और विपक्ष में बहुत कुछ लिखा गया है और अब भी लिखा जाता रहेगा, मैंने भी लिखा है और अब भी लिख रहा हूँ। मैं इस कानून को किसानों के हित में नहीं मानता हूं। अभी इन कानूनों का क्या असर पड़ता है यह थोड़े दिनों में पता चल जाएगा। फिलहाल कुछ सवाल हैं, उन्हें आप सबसे साझा कर रहा हूँ।

* अगर सरकार की एमएसपी को लेकर नीयत साफ है, तो वह मंडियों के बाहर होने वाली ख़रीद पर किसानों को एमएसपी की गारंटी दिलवाने से क्यों इंकार कर रही है? * एमएसपी से कम ख़रीद पर प्रतिबंध लगाकर, किसान को कम रेट देने वाली प्राइवेट एजेंसी पर क़ानूनी कार्रवाई की मांग को सरकार खारिज क्यों कर रही है? * कोरोना काल के बीच इन तीन क़ानूनों को लागू करने की मांग कहां से आई? ये मांग किसने की? किसानों ने या औद्योगिक घरानों ने? * देश-प्रदेश का किसान मांग कर रहा था कि सरकार अपने वादे के मुताबिक स्वामीनाथन आयोग के सी-2 फार्मूले के तहत एमएसपी दे, लेकिन सरकार ठीक उसके उलट बिना एमएसपी वाले प्रावधान के क़ानून लाई है। आखिर इसके लिए किसने मांग की थी? * प्राइवेट एजेंसियों को अब किसने रोका है किसान को फसल के ऊंचे रेट देने से? फिलहाल प्राइवेट एजेंसीज मंडियों में एमएसपी से नीचे पिट रही धान, कपास, मक्का, बाजरा और दूसरी फसलों को एमएसपी पर या एमएसपी से ज्यादा रेट क्यों नहीं दे रहीं? * उस स्टेट का नाम बताइए, जहां पर हरियाणा-पंजाब का किसान अपनी धान, गेहूं, चावल, गन्ना, कपास, सरसों, बाजरा बेचने जाएगा, जहां उसे हरियाणा-पंजाब से भी ज्यादा रेट मिल जाएगा? * जमाखोरी पर प्रतिबंध हटाने का फ़ायदा किसको होगा- किसान को, उपभोक्ता को या जमाखोर को? * सरकार नए क़ानूनों के ज़रिए बिचौलियों को हटाने का दावा कर रही है, लेकिन किसान की फसल ख़रीद करने या उससे कॉन्ट्रेक्ट करने वाली प्राइवेट एजेंसी, अडानी या अंबानी को सरकार किस श्रेणी में रखती है- उत्पादक, उपभोक्ता या बिचौलिया? * जो व्यवस्था अब पूरे देश में लागू हो रही है, लगभग ऐसी व्यवस्था तो बिहार में 2006 से लागू है, तो बिहार के किसान इतना क्यों पिछड़ गए? * बिहार या दूसरे राज्यों से हरियाणा में बीजेपी - जेजेपी सरकार के दौरान धान जैसा घोटाला करने के लिए सस्ते चावल मंगवाए जाते हैं, तो सरकार या कोई प्राइवेट एजेंसी हमारे किसानों को दूसरे राज्यों के मुकाबले मंहगा रेट कैसे देगी? * टैक्स के रूप में अगर मंडी की इनकम बंद हो जाएगी, तो मंडियां कितने दिन तक चल पाएंगी? * क्या रेलवे, टेलीकॉम, बैंक, एयरलाइन, रोडवेज, बिजली महकमे की तरह घाटे में बोलकर मंडियों को भी निजी हाथों में नहीं सौंपा जाएगा? * अगर ओपन मार्केट किसानों के लिए फायदेमंद है, तो फिर 'मेरी फसल मेरा ब्योरा' के ज़रिए क्लोज मार्केट करके दूसरे राज्यों की फसलों के लिए प्रदेश को पूरी तरह बंद करने का नाटक क्यों किया गया? * अगर हरियाणा सरकार ने प्रदेश में 3 नए कानून लागू कर दिए हैं, तो फिर मुख्यमंत्री खट्टर किस आधार पर कह रहे हैं कि वह दूसरे राज्यों से हरियाणा में मक्का और बाजरा नहीं आने देंगे? * अगर सरकार सरकारी ख़रीद को बनाए रखने का दावा कर रही है तो उसने इस साल सरकारी एजेंसी की ख़रीद का बजट क्यों कम कर दिया? वह यह आश्वासन क्यों नहीं दे रही है कि भविष्य में यह बजट और कम नहीं किया जाएगा? * जिस तरह से सरकार सरकारी ख़रीद से हाथ खींच रही है, क्या इससे भविष्य में ग़रीबों के लिए जारी पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम में भी कटौती होगी? * क्या राशन डिपो के माध्यम से जारी पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम, ख़रीद प्रक्रिया के निजीकरण के बाद अडानी-अंबानी के स्टोर के माध्यम से प्राइवेट डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम बनने जा रहा है? * आज तक किसी भी सरकार ने किसानों के लिए कानून बनाते समय, किसानों के संगठन से कभी कोई विचार विमर्श नहीं किया, जबकि हर बजट से पहले सरकार उद्योगपतियों के संगठन फिक्की या एसोचेम से बातचीत करती रहती है और उनके सुझावों पर अमल भी करती है। किसानों के सगठनों के साथ ऐसे विचार विमर्श क्यों नहीं हो सकते हैं? ❑

# हरिवंश कथा और संसदीय व्यथा

❑ श्रवण गर्ग

व तमाम लोग जो नीतिपरक (एथिकल) पत्रकारिता की मौत और चैनलों द्वारा परोसी जा रही नशीली खबरों को लेकर परेशान हैं, उन्हें हाल में दूसरी बार राज्यसभा के उपसभापति चुने गए खाँटी सम्पादक-पत्रकार हरिवंश नारायण सिंह को लेकर मीडिया में चल रही चर्चाओं पर नज़र डालने के बाद अपनी चिंताओं में संशोधन कर लेने चाहिए। वैसे यह बहस अब पुरानी पड़ चुकी है कि कैसे उस 'काले' रविवार (बीस सितम्बर) को लोकतंत्र की उम्मीदों का पूरी तरह से तिरस्कार करते हुए देश के करोड़ों किसानों और खेतिहर मज़दूरों को सड़कों पर उतरने के लिए मज़बूर कर दिया गया।

यह आलेख मूलतः उन सुधी पाठकों के लिए है, जो पत्रकारिता और राजनीति के बीच गहरी होती जा रही साठगाँठ को अंदर से समझना चाहते हैं। वर्ष 2014 में राज्यसभा में पहुँचने के पहले तक हरिवंश नारायण सिंह की उपलब्धियाँ एक निर्भीक और वैचारिक रूप से पारदर्शी, समाजवादी पत्रकार की रही हैं। मेरा भी उनके साथ कोई दो दशक से इसी रूप में परिचय रहा है। मैंने उनके साथ पत्रकारों के दल में एक-दो विदेश यात्राएँ भी की हैं। उनके अख़बार 'प्रभात खबर' के एक बड़े समारोह में पत्रकारिता पर बोलने के लिए राँची भी गया हूँ और उसके लिए लिखता भी रहा हूँ, पर हाल में काफ़ी कुछ हो जाने के बाद भी उन्हें लेकर पुरानी छवि में अभी पूरी दरार क़ायम नहीं हुई है। एक-दो झटके और ज़रूरी पड़ेंगे।

हरिवंश के 'सभापतित्व' में राज्यसभा में जो कुछ हुआ, उसे लेकर दो-तीन सवाल इन दिनों मीडिया की चर्चाओं में हैं।पहला तो यह कि एक पत्रकार के रूप में क़ायम अपनी छवि के अनुसार हरिवंश अगर अपने अख़बार के लिए उस दिन के ऐसे ही घटनाक्रम की रिपोर्टिंग कर रहे होते और 'सभापति' की कुर्सी पर कोई और बैठा हुआ होता तो वे क्या कुछ लिखना चाहते? दूसरा सवाल यह कि अगर ऐसे ही किसी और (महत्वाकांक्षी) पत्रकार को राजनीति में इसी तरह से नायक बनकर उभरने के अवसर प्राप्त हो जाएँ तो पाठकों को उससे अब किस तरह की उम्मीदें रखी जानी चाहिए? तीसरा यह कि कुर्सी पर उस दिन एक पत्रकार की आत्मा के बजाय किसी अनुभवी राजनीतिक व्यक्तित्व का शरीर उपस्थित होता तो क्या वह तब भी इतने ज़बरदस्त हो-हल्ले के बीच इतने ही शांत भाव और 'कोल्ड ब्लडेड' तरीक़े से काग़ज़ों में गर्दन समेटे ध्वनिमत से सबकुछ सम्पन्न कर देते या फिर जो सांसद मत विभाजन की माँग कर रहे थे, उनकी ओर भी नज़रें घुमाकर देखते? इस बहस में जाने का अब कोई अर्थ नहीं रह गया है कि मत विभाजन (वोटिंग) अगर हो जाता तो 'विवादास्पद' कृषि विधेयकों और सरकार की स्थिति क्या बनती? क्या एक पत्रकार दिमाग़ की शांत सूझबूझ से स्थिति सरकार के पक्ष में नहीं हो गई?

हरिवंश नारायण सिंह के 'सभापतित्व' में राज्यसभा का कुछ ऐसा इतिहास रच गया है कि पत्रकारिता और सत्ता की राजनीति के बीच के घालमेल को लेकर पीछे मुड़कर देखने की ज़रूरत पड़ गई है। सुप्रीम कोर्ट के सेवानिवृत्त न्यायाधीश मार्कण्डेय काटजू की अध्यक्षता में गठित प्रेस काउन्सिल ऑफ इंडिया का एडिटर्स गिल्ड ऑफ इंडिया की ओर से नामांकित मैं भी एक सदस्य था। बात अब लगभग दस साल पुरानी होने को आयी। जस्टिस काटजू मीडिया की आज़ादी को लेकर तब बहुत ही आक्रामक तरीक़े से काम कर रहे थे। इस सम्बंध में कई राज्यों से शिकायतें आ रही थीं। बिहार में मीडिया पर नीतीश सरकार के दबाव को लेकर प्राप्त शिकायतों के बाद एक समिति का गठन कर उसे बिहार भेजा गया और एक रिपोर्ट तैयार करके काउन्सिल के समक्ष प्रस्तुत की गई। किस्सा इतना भर ही नहीं है !

किस्सा यह है कि प्रेस काउन्सिल की समिति द्वारा तैयार की गई तथ्यपरक रिपोर्ट को चुनौती तब प्रभात खबर के सम्पादक हरिवंश नारायण सिंह द्वारा दी गई। काउन्सिल के सदस्यों को आश्चर्य हुआ कि रिपोर्ट को एकतरफ़ा और मनगढ़ंत नीतीश सरकार नहीं, बल्कि एक प्रतिष्ठित पत्रकार करार दे रहा है। हरिवंश ने रिपोर्ट के खिलाफ़ अख़बार में बड़ा आलेख लिखा और उसके निष्कर्षों को झूठा करार दिया।वर्ष 2016 में प्रधानमंत्री द्वारा घोषित की गई नोटबंदी के समर्थन में जिन कुछ पत्रकारों ने प्रमुखता से आलेख लिखे, उनमें हरिवंश भी थे। इसके साल भर के बाद तो जद(यू)-भाजपा की आत्माएँ मिलकर एक हो गईं और उसके एक साल बाद हरिवंश राज्यसभा में उप-सभापति बन गए।

राज्यसभा में जो कुछ हुआ, उसका क्लाइमेक्स यह है कि हरिवंश अगली सुबह धरने पर बैठे आठ निलम्बित सांसदों के लिए चाय-पोहे लेकर पहुँच गए, जिसका उन्होंने (सांसदों ने )उपयोग नहीं किया । उसके अगले दिन हरिवंश ने राष्ट्रपति के नाम एक मार्मिक पत्र लिखकर स्थापित कर दिया कि वास्तव में तो पीड़ित वे हैं और अपनी पीड़ा में एक दिन का उपवास कर रहे हैं।प्रधानमंत्री ने न सिर्फ हरिवंश के निलम्बित सांसदों के लिए चाय ले जाने की ट्विटर पर तारीफ़ की, बल्कि उनके द्वारा राष्ट्रपति को लिखे पत्र को भी जनता के लिए ट्विटर पर जारी करके बताया कि कैसे पत्र के एक-एक शब्द ने लोकतंत्र के प्रति 'हमारे विश्वास को नया अर्थ दिया है।' समूचे घटनाक्रम के ज़रिए अब जो कुछ भी प्राप्त हुआ है, उसे हम एक ऐतिहासिक दस्तावेज मानकर पत्रकारिता के पाठ्यक्रमों के लिए उपयोग में ला सकते हैं।

हरिवंश राजनीतिक रूप से तीन लोगों के काफ़ी क़रीब रहे हैं और उसके कारण उन्हें कभी पीछे मुड़कर नहीं देखना पड़ा।ये हैं : चंद्र शेखर ,नीतीश कुमार और नरेंद्र मोदी। तीनों का ही व्यक्तित्व, स्वभाव और राजनीतिक महत्वाकांक्षाएँ लगभग एक जैसी रही हैं।अतः असीमित सम्भावनाएँ व्यक्त की जा सकती हैं कि अपनी शांत प्रकृति, प्रत्यक्ष विनम्र छवि और तत्कालीन राजनीति की ज़रूरतों पर ज़बरदस्त पकड़ के चलते हरिवंश आने वाले समय में काफ़ी ऊँचाइयों पर पहुँचेंगे। सोचना तो अब केवल उन पत्रकारों को है, जो फिलहाल तो जनता की रिपोर्टिंग कर रहे हैं, पर कभी सत्ता की रिपोर्टिंग के भी आमंत्रण मिलें तो उन्हें क्या निर्णय करना चाहिए! ❑

# हरिवंश का 'आहत' होना!

❑ श्रीनिवास

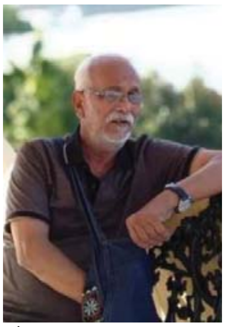

हरिवंश नारायण सिंह ने यदि गत बीस सितम्बर को राज्यसभा में अपने साथ हुए कथित दुर्व्यवहार से 'आहत' होकर उपवास की घोषणा न की होती और राष्ट्रपति के नाम लिखे अपने लम्बे चौड़े पत्र में अपने आदर्शों और प्रेरक विभूतियों में गांधी, जेपी, लोहिया, कर्पूरी ठाकुर और महात्मा बुद्ध का उल्लेख न किया होता, तो मैं इस मुद्दे पर कुछ लिखने से शायद परहेज कर जाता. दुविधा उनके साथ लम्बे समय तक काम किये होने के कारण बन गये सहज व आत्मीय रिश्ते की वजह से थी. उनके उपवास की खबर देख कर पहले तो लगा कि शायद उनको अपने किये पर भी कुछ अफ़सोस हुआ होगा; या कम से कम इस बात के लिए कि एक महत्वपूर्ण अवसर पर वे सदन का संचालन कुशलता से नहीं कर सके. लेकिन नहीं, वे तो विपक्षी सांसदों के 'अमर्यादित आचरण' से 'मर्माहत' हो गये! बेशक उन सदस्यों के आचरण की कोई प्रसंशा नहीं कर सकता, कर भी नहीं रहा है. लेकिन आपने क्या किया? देशहित के महत्वपूर्ण विधेयकों पर मत विभाजन की मांग के बावजूद 'ध्वनिमत' से बिल पास करवाने की सरकार की मंशा और उसमें आसन के अमर्यादित व पक्षपातपूर्ण आचरण को भी कैसे उचित ठहराया जा सकता है?

दो पल के लिए भी आँख मूँद कर उन महापुरुषों को याद करते हुए पूछते कि ऐसे अवसर पर वे क्या करते, तो शायद उन्हें एहसास हो जाता कि उनसे कहाँ चूक हो गयी. लेकिन ऐसे आत्म मूल्यांकन की उनको जरूरत कहां है अब!

आगे कुछ कहने से पहले यह कहना जरूरी लग रहा है कि यह महज संतुलन साधने के लिहाज से पत्रकार और संपादक के रूप में उनकी क्षमता व उपलब्धियों के बखान का अवसर नहीं है. वह सब सर्वविदित है. फिर भी एक बात का उल्लेख जरूर करूंगा कि उन्होंने एक 'कांग्रेसी' अखबार का चरित्र बदल दिया; और जब देश में संकीर्ण और आक्रामक हिंदुत्व अपने फन फैला रहा था, तब उन्होंने इस अखबार को उस उन्माद में बहने से बचा रखा था, इसे एक 'झारखंडी' पहचान दी और देश की साझा संस्कृति का मंच/जरिया बनाये रखा.

मेरा उनसे निजी रिश्ता स्पष्ट वैचारिक मतभेदों के बावजूद भी कभी कटु या असहज नहीं रहा. और इसका क्रेडिट उनको भी जाता है कि वे मुझ जैसे बेबाक और उनके हिसाब से 'बेअदब' मातहत का भी लिहाज करते रहे, इसलिए यह मेरे लिए कोई हिसाब चुकाने का अवसर भी नहीं है. पर धीरे धीरे सब कुछ बदलता गया.

इसलिए आज हरिवंश का 'दूसरा चेहरा' दिखाने का मौका है. जिस तरह उन्होंने 'रविवार' में रहते हुए अपने समय के 'बाहुबली' नेता सूरजदेव सिंह (अब दिवंगत) का 'दूसरा चेहरा' दिखाया था. यानी 'समाजसेवी' सूरजदेव, 'कोमल हृदय' सूरजदेव. एक पत्रकार कैसे अपनी कलम के जोर पर काले को सफेद साबित कर सकता है, वह कवर स्टोरी इस बात की शानदार मिसाल थी/है. जब उन्होंने बिहार में लालू- राबड़ी के 'जंगल राज' के खिलाफ छिड़े महाभारत में 'प्रभात खबर' को जदयू/एनडीए का 'पांचजन्य' बना दिया, वह भी एक सम्मानित पत्रकार की बाजीगरी का आलीशान नमूना था.

लेकिन अभी इससे बड़ा कमाल होना शेष था. 2014 के पहले वे बाकायदा जदयू में शामिल होकर राज्यसभा के सदस्य बन चुके थे. 2015 का विधान सभा चुनाव नीतीश कुमार ने 'जंगल राज' के प्रणेता लालू प्रसाद के साथ मिलकर लड़ा, जीत कर सरकार भी बना ली, तब यह जिज्ञासा स्वाभाविक थी कि जदयू प्रवक्ता के रूप में हरिवंश उस बेमेल व अवसरवादी गंठजोड़ को डिफेंड करेंगे या उससे दूर हो जायेंगे. मगर नहीं! वे टीवी डिबेट में 'सांप्रदायिकता' को सबसे बड़ी समस्या और उस गंठजोड़ को जरूरी बताते हुए भाजपा के खिलाफ तर्क देते नजर आये! हालांकि तब वे एकदम हास्यास्पद और 'बेचारे' दिखते थे. फिर जब राज्यसभा के उप सभापति बन गये, तब तो वह रास्ता यहां पहुंचना ही था.

वैसे भी मुझे उनके इस अंदाज से कोई अचरज नहीं हुआ. इसलिए कि जेपी के गाँव 'सिताब दियारा' का और चंद्रशेखर का नजदीकी होने के कारण उनके 'समाजवादी' होने का जो मुगालता शुरू में हुआ था, वह तो दो-तीन साल में ही टूट चुका था. इसलिए उन्होंने अध्यक्ष के रूप में पक्षपात किया या सरकार की बदनीयती में उसका साथ दिया, यह मेरे लिए कोई अनहोनी बात नहीं थी. देश की सर्वोच्च जन प्रतिनिधि सभा (संसद) के उच्च सदन के उप-सभापति के आसन पर बेईमानी का आरोप लगा, यह भी नयी बात नहीं थी! लेकिन तब उस आसन पर एक ऐसा व्यक्ति बैठा था, जिसके साथ हमने कभी काम किया था, जिसका हम सम्मान करते रहे हैं और जो मेरी बिरादरी (पत्रकार) का एक प्रतिष्ठित नाम रहा है, यह जरूर खल गया.

वे जातिवादी हैं या नहीं, नहीं कह सकता, लेकिन वे सामाजिक न्याय या आरक्षण के घोर विरोधी हैं, पूंजीवाद व निजीकरण के पक्षधर हैं, इसमें कोई संदेह नहीं. ऐसा आदमी खुद को समाजवादी और जेपी, डॉ लोहिया तथा कर्पूरी ठाकुर को अपना आदर्श बताये, तो क्या कहा जाए! हाँ, एक और घोषित समाजवादी नीतीश के साथ रहने की यह शर्त हो सकती है, इतना समझा जा सकता है. और गोडसेवादियों के सान्निध्य और उनकी कृपापूर्ण छत्रछाया में रहते हुए भी गांधी का नाम! लेकिन जब मोदी ऐसा कर सकते हैं, तो हरिवंश क्यों नहीं? हाँ, जेपी पर इनके कॉपीराइट को चुनौती नहीं दी जा सकती, सिताब दियारा के जो ठहरे. लेकिन बुद्ध! कम से कम इस महामानव को तो बख्श देते. लेकिन आप तो विपक्षी सांसदों के 'दुर्व्यवहार' से ही 'आहत' हो गये! ❑

# किसान आंदोलन और विश्व बैंक के चाबी वाले खिलौने

❑ देवेन्द्र पाल

सड़क से लेकर चौक-चौराहों तक जहां भी आंदोलनकारी किसान बैठे हैं, जाने कहाँ-कहाँ से दूध के बड़े-बड़े बलटोहों में लंगर-पानी आ रहा है और जिस तरह से किसानों ने रेल पटरियों पर दो-दो सौ मीटर लंबे तम्बू गाड़ दिये हैं, लगता है कि यह लड़ाई लंबी चलेगी। आंदोलन की तीव्रता और तेवर बता रहे हैं कि किसानों का निशाना इस बार प्रधानमंत्री मोदी की जिद की रीढ़ है।

2014 के लोकसभा चुनावों में मोदी और उनकी बीजेपी ने यह वादा किया था कि अगर हम चुनाव जीतते हैं तो जीतने के 12 महीने के अंदर स्वामीनाथन कमीशन के सुझावों के अनुसार न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) लागू कर देंगे। 12 महीने बीत जाने के बाद उन्होंने कोर्ट में एक हलफनामा दे दिया कि हम यह एमएसपी नहीं दे सकते। देश की जनता को बताया गया कि हम तो पहले से ही स्वामीनाथन कमीशन के सुझाव लागू कर चुके हैं। अब सवाल यह उठता है कि अगर किसानों को सचमुच स्वामीनाथन कमीशन के सुझाव के मुताबिक लागत से 50% ज्यादा समर्थन मूल्य मिल रहा है तो फिर इन बावले किसानों ने रेल ट्रैक को तकिया क्यों बना लिया है?

किसानों के आक्रोश का ताप न बर्दाश्त करते हुए एनडीए के सबसे पुराने सहयोगी प्रकाश सिंह बादल और उनकी पार्टी ने भी अंततः 22 साल पुराने गठबंधन को तोड़ दिया है। पंजाब में बीजेपी के लिए इसे बहुत बड़ी क्षति कहा जा सकता है। देखने वाली बात यहाँ यह है कि मोदी इतनी बड़ी कीमत चुकाने के लिए तैयार क्यों हैं? दरअसल मोदी का सपना मनमोहन सिंह के सपने से अलग नहीं है। मोदी की भी यही इच्छा है कि भारत की 85% आबादी शहरों में रहने लगे। भारत को पुलिस राज्य में तब्दील करके ज़मीनें हड़पने का जो काम वित्त मंत्री से गृहमंत्री बने पी. चिदम्बरम ने शुरू किया था, उसे बड़ी मुस्तैदी और बेरहमी से मोदी अगर आगे बढ़ा रहे हैं तो उसके पीछे विश्व बैंक का दबाव नहीं तो और क्या है?

मुक्त बाज़ार की गढ़ी जाने वाली नीतियों की बागडोर जिस विश्व बैंक के हाथों में है, वह जुमलेबाजियों से संतुष्ट या भ्रमित होने वाला नहीं है। वह तो पूछेगा ही कि कॉरपोरेट घरानों की गाड़ियाँ किसानों के खेतों तक आराम से पहुँच सकें, इसके लिए 31 मई, 2018 को 5000 लाख डॉलर का जो कर्ज ग्रामीण सड़कों को दुरुस्त करने के लिए दिया था, वह कहाँ गया?

ज़ाहिर सी बात है, लेनदार को अपने पैसे की चिंता तो होगी ही, जब उसे खबर मिलेगी कि भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (कैग) ने पाया है कि मोदी सरकार ने खुद कानून का उल्लंघन करते हुए वर्ष 2017-18 और 2018-19 के दौरान जीएसटी मुआवजा उपकर को सीएफआई में ही रोके रखा और 47,272 करोड़ रुपये अन्य कार्यों में इस्तेमाल किया, तो क्या होगा? अब यहाँ कुछ हेरा-फेरी होगी भी तो ज्यादा से ज्यादा क्या होगा, आरबीआई का गवर्नर इस्तीफा देकर भाग जाएगा, लेकिन विश्व बैंक तो सुनने वाला नहीं है। वह तो अपनी शर्तें पूरी करने के लिए कहेगा ही।

आंदोलनों से विश्व बैंक का कोई लेना-देना नहीं होता। कोई मरे या जिये, कॉरपोरेट सेक्टर का नुकसान नहीं होना चाहिए। आँकड़े बताते हैं कि तीसरी दुनिया के देश विश्व बैंक के 'खास' मशवरों के चलते ही कर्ज के नीचे दबते चले गए हैं। भारत में सिंगरौली विद्युत परियोजना और सरदार सरोवर बांध से जुड़े जमीनी आंदोलनों के बावजूद लाखों लोग तबाह हुए या ऐसी कई बड़ी परियोजनाओं के चलते मानव-विस्थापन या पर्यावरण की क्षति हुई है तो होती रहे, विश्व बैंक की सेहत पर इससे क्या फ़र्क पड़ता है? तभी तो आलोचक विश्व बैंक को 'भेड़ की खाल में भेड़िया' कहते हैं। विश्व बैंक के इस खेल को समझने के लिए थोड़ा पीछे चलते हैं।

कृषि विशेषज्ञ डॉ. देविंदर शर्मा बताते हैं कि वह 1996 में स्वामीनाथन रिसर्च फ़ाउंडेशन में काम करते थे तो एक कॉन्फ्रेंस में विश्व बैंक के उपाध्यक्ष ने बताया था कि उनके अंदाजे के अनुसार भारत में इतने लोग गाँव छोड़कर शहरों में बस जाएंगे जिनकी आबादी ब्रिटेन, फ्रांस और जर्मनी की कुल आबादी यानि बीस करोड़ से भी ज्यादा होगी। डॉ. देविंदर शर्मा को यह बात समझ में ही नहीं आई कि इस विस्थापन के दरअसल निर्देश दिये जा रहे हैं। यह बात उन्हें तब समझ में आई, जब उन्होंने 2008 की विश्व बैंक की रिपोर्ट देखी तो उसमें साफ लिखा था कि जो काम आपसे करने के लिए कहा गया था, आपने नहीं किया।

90 के दशक में ही विश्व बैंक ने भारत को यह हिदायत दे दी थी कि ज्यादा से ज्यादा किसानों को गावों से निकाल कर शहरों की ओर धकेला जाए ताकि शहरी उद्योग को सस्ते श्रमिक मिलें और किसानों की ज़मीन उद्योग-धंधों के काम आ सके। विश्व बैंक मानता है कि भूमि एक उत्पादक इकाई है और इसे अकुशल लोगों यानि किसानों के हाथों में नहीं छोड़ा जा सकता। भूमि अधिग्रहण या 'अन्य तरीकों' से उन्हें भूमि से बेदखल करना ही होगा। केंद्र सरकार द्वारा पारित किए गए कृषि कानून का यह नया त्रिशूल ही उन 'अन्य तरीकों' में से एक है। विश्व बैंक की 2008 की रिपोर्ट में यह स्पष्ट रूप से लिखा गया है कि अगर युवा वर्ग कृषि से जुड़ा हुआ है और उन्हें खेती बाड़ी के अलावा और कुछ नहीं आता तो भारत सरकार को चाहिए कि उन्हें प्रशिक्षण दें, ताकि वे बेहतर औद्योगिक मजदूर बन सकें। विश्व बैंक ने यह निर्देश भाजपा की अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार को भी दिये थे और कांग्रेस की मनमोहन सिंह की सरकार को भी। विश्व बैंक की दृष्टि में दोनों ही सरकारें नकारा साबित हुईं।

2014 में मोदी ने प्रधानमंत्री बनते ही विश्व बैंक के निर्देशों पर अमल करने के इरादे से भूमि अधिग्रहण विधेयक तैयार किया और किसानों की जमीनें हड़पने की पूरी तैयारी कर ली, लेकिन इस भूमि अधिग्रहण विधेयक को किसानों की एकता का ग्रहण लग गया। अब मोदी सरकार कृषि क़ानूनों का यह जो त्रिशूल लेकर आई है, इसका भी अंतिम लक्ष्य यही है।

2006 में बिहार में कृषि उत्पादन मार्केट कमेटी को खत्म करने के बाद जिस तरह वहाँ के करोड़ों किसानों को अप्रवासी मजदूरों में बदल दिया गया है, वही हश्र पंजाब, हरियाणा और अन्य राज्यों के किसानों का भी होने वाला है। यह बात अगर गलत है तो प्रधानमंत्री मोदी को स्पष्ट शब्दों में देश को यह आश्वासन देना चाहिए कि वह विश्व बैंक के ऐसे किसी निर्देश का पालन करने नहीं जा रहे हैं, जो देश के किसानों के हित में नहीं है। मोरों को दाने खिलाने के बाद अब प्रधानमंत्री मोदी को अपनी देशभक्ति और ईमानदारी साबित करने के लिए अपना 'मौन' तोड़कर देश को बता देना चाहिए कि वे विश्व बैंक के चाबी वाले खिलौने नहीं हैं। ❑

# व्यापारियों के रहमोकरम पर किसान

❑ धीरज मिश्रा

केन्द्र सरकार ने आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 में संशोधन किया है, जिसके जरिये खाद्य पदार्थों की जमाखोरी पर लगा प्रतिबंध हटा दिया गया. इसका मतलब है कि अब व्यापारी असीमित मात्रा में अनाज, दालें, तिलहन, खाद्य तेल, प्याज और आलू आदि इकट्ठा करके रख सकते हैं.दूसरा, सरकार ने एक नया कानून- कृषि उत्पादन व्यापार और वाणिज्य (संवर्धन और सुविधा) अध्यादेश, 2020 पेश किया है, जिसका उद्देश्य कृषि उपज विपणन समितियों (एपीएमसी मंडियों) के बाहर भी कृषि उत्पाद बेचने और खरीदने की व्यवस्था तैयार करना है.तीसरा, केंद्र ने एक और नया कानून- मूल्य आश्वासन पर किसान (बंदोबस्ती और सुरक्षा) समझौता और कृषि सेवा अध्यादेश, 2020– पारित किया है, जो कॉन्ट्रैक्ट फार्मिंग को कानूनी वैधता प्रदान करता है, ताकि बड़े बिजनेस और कंपनियां कॉन्ट्रैक्ट पर जमीन लेकर खेती कर सकें.

इन अध्यादेशों को लेकर किसानों के हित की बात करने वाले कृषि विशेषज्ञों में भी अलग-अलग मत हैं. कुछ लोगों का मानना है कि आवश्यक वस्तु अधिनियम में संशोधन एक सही कदम है. ये एक्ट 1950 के दशक में लाया गया था, जब देश खाद्य संकट से जूझ रहा था. जाहिर है यह कानून तात्कालिक स्थिति को ध्यान में रखकर बनाया गया था, इसलिए अब खाद्य आपातकालीन स्थिति को छोड़कर, खाद्य पदार्थों को जमा करने पर रोक लगाने की जरूरत नहीं है. इस कदम से ट्रेडर्स और स्टॉकिस्ट को फायदा होगा और हो सकता है कि इसकी वजह से कृषि उत्पादों के बाजार मूल्य में गिरावट न आए. हालांकि एक विचार यह भी है कि जमाखोरी को कानूनी मान्यता देने से सिर्फ व्यापारियों को फायदा होगा, किसानों को नहीं. जब भी प्याज वगैरह के दाम बढ़ते हैं तो इसकी प्रमुख वजह यही बताई जाती है कि कुछ लोगों द्वारा जमाखोरी करने के कारण ऐसा हो रहा है. वहीं एपीएमसी मंडियों के बाहर खरीद और बिक्री की व्यवस्था बनाने के लिए लाए गए एक अन्य अध्यादेश को लेकर विशेषज्ञों का कहना है कि यह एपीएमसी की व्यवस्था खत्म करने की कोशिश है, जहां करीब-करीब एमएसपी के बराबर किसानों को मूल्य मिल जाता था.

मौजूदा समय में किसानों को पूरे देश में फैली 6,900 एपीएमसी मंडियों में अपनी कृषि उपज बेचने की अनुमति है. जिन राज्यों में एपीएमसी एक्ट लागू है, वहां इन मंडियों के बाहर कृषि उपज बेचने और खरीदने पर प्रतिबंध हैं.अब नए कानून के तहत सरकार ने कहा है कि इन मंडियों के बाहर उपज की बिक्री और खरीद पर कोई राज्य-कर नहीं लगेगा. वहीं एपीएमसी मंडियों में टैक्स लगता रहेगा. इसकी वजह से ये आशंका है कि अब व्यापारी एपीएमसी मंडियों के अंदर खरीद नहीं करेंगे और वे किसानों से इसके बाद खरीदारी करेंगे, जहां उन्हें टैक्स नहीं देना पड़ेगा. इस पृष्ठभूमि में चिंता ये है कि धीरे-धीरे एपीएमसी मंडियां खत्म हो जाएंगी और तब ट्रेडर्स अपने मनमुताबिक दाम पर किसानों से खरीदारी करेंगे, जो संभवतः एमएसपी से कम होगा. ऐसा इसलिए कहा जा रहा है, क्योंकि एपीएमसी मंडी के अंदर कई सारे खरीदार होते हैं, जिसके कारण प्रतिस्पर्धा की स्थिति के चलते मूल्यों में बढ़ोतरी होती है. बिक्री के ज्यादा विकल्प होने के कारण किसान उसे अपना सामान बेचता है, जो उसे उचित दाम देता है.क्या एपीएमसी व्यवस्था नहीं होने से किसानों को फायदा होगा?

स्वराज इंडिया के अध्यक्ष और कृषि मामलों के जानकार योगेंद्र यादव कहते हैं, 'इस सवाल के जवाब के लिए हमें सिर्फ बिहार को देखने की जरूरत है, जिसने साल 2006 में एपीएमसी व्यवस्था खत्म कर दी थी और उन राज्यों को भी देखा जाए, जहां कभी भी एपीएमसी नहीं रही.' मैं अपने व्यक्तिगत अनुभव से कह सकता हूं कि किसान प्राइवेट ट्रेडर्स के रहम पर जीने के बजाय एपीएमसी द्वारा भले ही शोषित हो, लेकिन अपना उत्पाद यहीं पर बेचना बेहतर समझेगा. यह अध्यादेश कहता है कि बड़े उद्योग सीधे किसानों से खरीद कर सकेंगे, लेकिन ये यह नहीं बताता कि जिन किसानों के पास मोल-भाव करने की क्षमता नहीं है, वे इससे कैसे लाभान्वित होंगे.' ये बात सही है कि एपीएमसी मंडियों के साथ कई समस्याए हैं, ऐसा नहीं है कि किसान इन मंडियों से बहुत खुश हैं, लेकिन सरकार ये जो नई व्यवस्था ला रही है, उसके कारण जो भी थोड़ी बहुत बेहतर व्यवस्था थी, वह खत्म हो जाएगी और किसान व्यापारियों के रहम पर जीने को मजबूर हो जाएगा.'

इस अध्यादेश की घोषणा करते हुए केंद्रीय कृषि मंत्री नरेंद्र सिंह तोमर ने कहा था कि अब किसान अपने घर से उपज सीधे कंपनियों, प्रोसेसर, कृषक उत्पादक कंपनियों (एफपीओ) और सहकारी समितियों को भी बेच सकते हैं और बेहतर मूल्य प्राप्त कर सकते हैं. उन्होंने कहा था कि किसानों के पास विकल्प होगा कि वह किसे और किस दर पर अपनी उपज बेचे.हालांकि विशेषज्ञों का कहना है कि ये सब सुनने में तो अच्छा लग सकता है, लेकिन हकीकत में ऐसा होने के लिए किसान के पास पर्याप्त पूंजी होनी चाहिए, किसान उतना पढ़ा लिखा होना चाहिए कि वह बाजार के खेल को समझ सके, उसमें इतनी समझ हो कि वह बाजार की भविष्य की स्थिति का आकलन कर सके और उसके पास भारी-भरकम उपज होनी चाहिए ताकि वह बाजार में टिक सके.भारतीय परिदृश्य को अगर देखें तो ये चीजें संभव होती दिखाई नहीं देती हैं. देश में 85 फीसदी से अधिक छोटे एवं मध्यम किसान हैं, जिनके पास पांच एकड़ से कम भूमि है. देश में औसत कृषि भूमि 0.6 हेक्टेयर है. इसके कारण किसानों की उतनी ज्यादा उपज नहीं होती है कि वह बाजार में बेच सके. कई बार ऐसा होता है कि किसान अगली बुवाई के लिए अपनी उपज को बेचता है और आगे चलकर फिर उसी उपज को बाजार से खरीदता है. इसके अलावा सभी किसानों के पास ये भी व्यवस्था नहीं होती है कि वे अपने उत्पाद को रोककर रख सकें और जब बाजार में मूल्य ऊपर जाए, तब उसे बेचें.

लुधियाना स्थिति पंजाब एग्रीकल्चर यूनिवर्सिटी के रजिस्ट्रार और वाइस चांसलर

आरएस सिद्धू और बीएस ढिल्लन इस मामले को लेकर लिखे अपने एक लेख में कहते हैं, 'आमतौर पर व्यापार की प्रकृति शोषक की होती है और यह लाभ को बढ़ाने के सिद्धांतों पर काम करती है. व्यापार के संबंध में विक्रेता और खरीदार के पास बराबर जानकारी नहीं होती. देश में कृषि उत्पाद अलग-अलग राज्यों में भिन्न-भिन्न हैं. पंजाब, हरियाणा तथा कुछ अन्य राज्य खूब खाद्यान्न का उत्पादन करते हैं, जबकि अधिकतर केंद्रीय, उत्तर पूर्वी और पूर्वी राज्यों में खाद्यान्न की कमी है और वे अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए बाजार पर निर्भर रहते हैं.' इसकी प्रबल संभावना है कि कटाई होने के बाद ट्रेडर्स अधिक उत्पादन वाले राज्यों से कम दाम पर खाद्यान्न खरीदेंगे और जिन राज्यों में इसका उत्पादन कम होता है, वहां पर इसे अधिक दामों में बेचेंगे. ऐसी स्थिति में उत्पादक और उपभोक्ता दोनों को ही आर्थिक नुकसान होगा और ट्रेडर्स को खूब लाभ होगा. लाभ का यह अंतर मौजूदा विनियमित मूल्य व्यवस्था की तुलना में काफी ज्यादा होगा.'

जिन राज्यों में एपीएमसी एक्ट नहीं है और वहां के कृषि बाजारों को रेगुलेट नहीं किया जाता है, ऐसी जगहों के अनुभव दर्शाते हैं कि इस स्थिति में किसानों को उचित दाम मिलने की संभावना बहुत कम होती है.साल 2015-16 के नाबार्ड सर्वे के मुताबिक, बिहार के एक किसान परिवार की औसत आय 7,175 रुपये प्रति महीने है. वहीं पंजाब के किसान परिवार की औसत आय 23,133 रुपये और हरियाणा के किसान परिवार की आय 18,496 रुपये है. बिहार में एपीएमसी एक्ट नहीं लागू है, वहीं हरियाणा में एपीएमसी लागू है और यहां के बाजार को रेगुलेट किया जाता है. नाबार्ड के मुताबिक, देश के एक किसान परिवार की औसत आय 8,932 रुपये प्रति महीने है. यानी कि 4-5 लोगों के परिवार में करीब 300 रुपये प्रतिदिन की आय होती है. ऐसे में बड़ा सवाल ये है कि क्या किसान ऐसी स्थिति में है या इतना पढ़ा-लिखा है कि वह व्यापारियों से मोल-भाव कर सके सके या बाजार के खेल को समझ सके?

इन अध्यादेशों की इसलिए भी आलोचना हो रही है, क्योंकि राष्ट्रीय स्वास्थ्य अपातकाल के बीच अचानक से इनकी घोषणा कर दी गई और इस पर किसानों से ही विचार विमर्श नहीं किया गया. कृषि संगठन इस बात से ही नाराज हैं कि किसानों के लिए लाए गए तथाकथित कृषि सुधार पर किसानों से ही चर्चा नहीं की गई. अखिल भारतीय किसान संघर्ष समन्वय समिति के संयोजक वीएम सिंह कहते हैं, 'सरकार एक राष्ट्र, एक मार्केट बनाने की बात कर रही है, लेकिन उसे ये नहीं पता कि जो किसान अपने जिले में अपना उत्पाद नहीं बेच पाता है, वह राज्य के बाहर क्या बेच पाएगा. किसान के पास न साधन है और न ही गुंजाइश है कि वह अपनी फसल दूसरे मंडल या प्रांत में ले जा सके.' इस अध्यादेश की धारा 4 में कहा गया है कि किसान को पैसा उस समय या तीन कार्य दिवस में दिया जाएगा. किसान का पैसा फंसने पर उसे दूसरे मंडल या प्रांत में बार-बार चक्कर काटने होंगे. न तो दो-तीन एकड़ जमीन वाले किसान के पास लड़ने की ताकत है और न ही वह इंटरनेट पर अपना सौदा कर सकता है.' कृषि विशेषज्ञ देविंदर शर्मा कहते हैं कि जिसे हम रिफॉर्म कह रहे हैं, वह अमेरिका और यूरोप में कई दशकों से लागू है और इसके बावजूद वहां के किसानों की आय में कमी आई है. उन्होंने कहा, 'अमेरिका कृषि विभाग के मुख्य अर्थशास्त्री का कहना है कि 1960 के दशक से किसानों की आय में गिरावट आई है. इन सालों में यहां पर अगर खेती बची है तो उसकी वजह बड़े पैमाने पर सब्सिडी के माध्यम से दी गई आर्थिक सहायता है.' कमोडिटी ट्रेडिंग और मल्टी-ब्रांड रिटेल के प्रभुत्व के बावजूद अमेरिकन फार्म ब्यूरो फेडरेशन ने 2019 में कहा कि 91 प्रतिशत अमेरिकी किसान दिवालिया हैं और 87 प्रतिशत किसानों का कहना है कि उनके पास खेती छोड़ने के अलावा कोई दूसरा विकल्प नहीं बचा है.' बिहार में 2006 से एपीएमसी नहीं है और इसके कारण होता ये है कि ट्रेडर्स बिहार से सस्ते दाम पर खाद्यान्न खरीदते हैं और उसी चीज को पंजाब और हरियाणा में एमएसपी पर बेच देते हैं, क्योंकि यहां पर एपीएमसी मंडियों का जाल बिछा हुआ है. उन्होंने कहा, 'यदि सरकार इतना ही किसानों के हित को सोचती है तो उसे एक और अध्यादेश लाना चाहिए, जो किसानों को एमएसपी का कानूनी अधिकार दे दे, जो ये सुनिश्चित करेगा कि एमएसपी के नीचे किसी से खरीद नहीं होगी. इससे किसानों का हौसला बुलंद होगा, कॉन्ट्रैक्ट फार्मिंग को बढ़ावा देने के लिए लाए गए तीसरे अध्यादेश को लेकर भी विवाद है. सरकार कहती है कि इससे किसानों की आमदनी बढ़ेगी और उसके उत्पाद की बिक्री सुनिश्चित रहेगी.हालांकि विशेषज्ञों का कहना है कि इससे कॉरपोरेट खेती को बढ़ावा मिलेगा और उन्हीं को लाभ मिलेगा, किसानों को नहीं.वीएम सिंह इसके कुछ उदाहरण देते हुए कहते हैं, '30 साल पहले पंजाब के किसानों ने पेप्सिको के साथ आलू और टमाटर उगाने के लिए समझौते किए और बर्बाद हो गए. महाराष्ट्र के उत्पादक कपास में बर्बाद हुए, जिससे आत्महत्याएं बढ़ीं. इस अध्यादेश की धारा 2(एफ) से पता चलता है कि ये किसके लिए बना है. एफपीओ को किसान भी माना गया है और किसान तथा व्यापारी के बीच विवाद की स्थिति में बिचौलिया भी बना दिया गया है.' इसमें विवाद की स्थिति उत्पन्न होने पर किसान ही भुगतेगा. इसके तहत आपसी विवाद सुलझाने के लिए 30 दिन के भीतर समझौता मंडल में जाना होगा. वहां न सुलझा तो धारा 13 के अनुसार एसडीएम के यहां मुकदमा करना होगा. एसडीएम के आदेश की अपील जिलाधिकारी के यहां होगी और जीतने पर किसान को भुगतान करने का आदेश दिया जाएगा. देश के 85 फीसदी किसान के पास दो-तीन एकड़ जोत है. विवाद होने पर उनकी पूरी पूंजी वकील करने और ऑफिसों के चक्कर काटने में ही खर्च हो जाएगी.'

योगेंद्र यादव कहते हैं कि यह अध्यादेश देश में सालों से चली आ रही अनौपचारिक एग्रीमेंट ठेका या बंटाई की समस्या का कोई समाधान नहीं करता है. अब जमीन का मालिक स्थानीय बंटाईदार के बजाय कंपनी के साथ लिखित में कॉन्ट्रैक्ट कर अपनी जमीन देना बेहतर समझेगा.' किसानों का कहना है कि यदि सरकार इन अध्यादेशों को बनाए रखना चाहती है तो बनाए रखे, उन्हें कोई समस्या नहीं. बशर्ते सरकार सिर्फ एक और अध्यादेश या कानून ला दे कि देश में कहीं भी एमएसपी से कम पर कृषि उपज की खरीदी नहीं होगी. यदि कोई भी व्यापारी या ट्रेडर ऐसा करता है, तो उसके खिलाफ कानूनी कार्रवाई की जाएगी.भारत सरकार द्वारा इन मुद्दों पर जवाब दिया जाना अभी बाकी है.

**- द वायर**

# राज्यों को आर्थिक तौर पर कंगाल बनाने की केंद्र सरकार की रणनीति के निहितार्थ

❑ डॉ. सिद्धार्थ

भाजपा विभिन्न तरीकों से देश की विविधता एवं विकेंद्रीकरण को समाप्त करने की कोशिश कर रही है। इसका लक्ष्य पूरे देश में संघ की सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियों को थोपने के मार्ग की सारी रुकावटों को दूर करना और दूसरा पूरे देश के कार्पोरेटीकरण की प्रक्रिया को तीव्र करना है। इन दोनों लक्ष्यों को तेजी से हासिल करने की एक अनिवार्य शर्त है, राज्यों की संवैधानिक स्वायत्तता को कम से कम कर देना या करीब-करीब समाप्त कर देना।

हम सभी जानते हैं कि भारतीय संविधान ने राज्यों और केंद्र के बीच शक्तियों का बंटवारा तीन रूपों में सूचीबद्ध किया है। पहली वह सूची, जो पूरी तरह राज्यों के अधिकार क्षेत्र में है। दूसरी वह सूची, जिसमें राज्यों और केंद्र दोनों का समान अधिकार है, जिसे समवर्ती सूची कहते हैं और तीसरी वह सूची, जो पूरी तरह केंद्र सरकार के अधिकार क्षेत्र में है।

पूरे देश में संघ-भाजपा पोषित हिंदू राष्ट्रवाद की संकल्पना लागू करने का काम और देश का पूरी तरह कार्पोरेटीकरण करने का कार्य भाजपा दो तरीकों से कर सकती थी। पहला केंद्र के साथ सभी राज्यों में अपनी सरकारें बनाकर और दूसरा सभी राज्यों को केंद्र की इच्छानुसार चलाकर। केंद्र के साथ सभी राज्यों में एक साथ सरकार बनाए रखना एक मुश्किल कार्य है, भाजपा के तमाम हथकंडों के बाद भी विभिन्न प्रदेशों में गैर-भाजपा सरकारें बन रही हैं। ऐसे में दूसरा रास्ता बचता है, वह है गैर-भाजपा सरकारों को केंद्र की भाजपा सरकार के इशारे पर चलने के लिए मजबूर करना। इसके लिए भाजपा तरह-तरह के हथकंडे इस्तेमाल कर रही है, जिसमें विभिन्न केंद्रीय एजेंसियों का गैर-भाजपा सरकारों के खिलाफ इस्तेमाल भी शामिल है।

विभिन्न राज्यों की गैर-भाजपा सरकारों को नियंत्रित करने, उन्हें जनता के बीच अलोकप्रिय बनाने और उन्हें दबाव में लेकर इच्छानुसार संचालित करने के लिए केंद्र की भाजपा सरकार राज्यों को आर्थिक तौर पर कंगाल बना रही है और यह कार्य कोविड-19 के दौरान जोर-शोर से किया जा रहा है। यहां भी भाजपा आपदा को अवसर के रूप में इस्तेमाल कर रही है।

आर्थिक तौर पर राज्यों को कंगाल बनाने का सबसे ताजा उदाहरण राज्यों को जीएसटी (वस्तु एवं सेवा कर) की क्षतिपूर्ति देने से इंकार कर देना है, जिसके लिए केंद्र, राज्यों के साथ किए गए जीएसटी समझौते के तहत नैतिक और कानूनी तौर पर बाध्य है। वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने कोविड-19 को एक्ट ऑफ गॉड (भगवान की कार्रवाई) कह कर राज्यों को कर क्षतिपूर्ति देने से इंकार कर दिया।

उन्होंने यह भी कह दिया कि राज्य अपने आर्थिक संसाधन खुद जुटाएं, जबकि तथ्य यह है कि राज्यों के हाथ में आर्थिक संसाधन जुटाने के वित्तीय स्रोत और अधिकार नहीं के बराबर बचे हैं। यहां यह याद कर लेना जरूरी है कि जीएसटी से पहले राज्य अपने प्रदेशों में विभिन्न तरह के कर लगाने को स्वतंत्र थे। जीएसटी के बाद सिर्फ पेट्रोलियम पदार्थ, शराब, रियल स्टेट और बिजली ही ऐसे क्षेत्र बचे हैं, जहां राज्य सरकारें अपनी इच्छानुसार कर लगाने को स्वतंत्र हैं।

जीएसटी लागू करते समय जो समझौता हुआ था, उसके अनुसार पांच सालों (2017-22) तक केंद्र सरकार को जीएसटी क्षतिपूर्ति फंड से राज्यों को प्रत्येक दो महीने पर उतनी क्षतिपूर्ति देनी है, जितना राज्यों के करों का नुकसान होगा। वर्तमान समय में केंद्र सरकार को राज्यों को करीब 2.35 लाख करोड़ रुपये की क्षतिपूर्ति देनी है। लेकिन 27 अगस्त, 2020 को हुई जीएसटी काउंसिल की बैठक में केंद्र सरकार ने कह दिया है कि राज्यों के कर में हुई 2.35 लाख करोड़ रुपये की क्षति में सिर्फ 97,000 करोड़ रुपये की क्षति जीएसटी लागू होने के चलते हुई है, शेष नुकसान कोविड-19 के चलते यानि भगवान की कार्रवाई (एक्ट ऑफ गॉड) के चलते हुआ है, जिसके लिए केंद्र सरकार जिम्मेदार नहीं है। यह बात मीटिंग में स्वयं वित्तमंत्री निर्मला सीतारमण ने कही।

देश के कई सारे राज्यों की स्थिति यह है कि उनके पास आवश्यक खर्चों के लिए भी पैसा नहीं है, यहां तक कि वे कोविड-19 के दौर में फ्रंट लाइन के सबसे अगली पंक्ति के चिकित्साकर्मियों को भी तनख्वाह देने की स्थिति में नहीं हैं। केंद्र सरकार ने राज्यों को अपने तरीके से संसाधन जुटाने, बचाने और उधार लेने के परामर्श दिए, जबकि सच्चाई यह है कि राज्यों के पास वित्तीय संसाधन जुटाने के बहुत कम स्रोत और अधिकार बचे हैं।

करीब-करीब सभी गैर-भाजपा सरकारों ने केंद्र के प्रस्ताव को खारिज कर दिया है। प्रदेशों की भाजपा सरकारें भी मन-मसोस कर चुप हैं। वे केन्द्र की मुखालफत करने की सोच भी नहीं सकते, क्योंकि भाजपा शासित राज्यों के अधिकांश मुख्यमंत्री और उपमुख्यमंत्रियों की अपनी स्वतंत्र राजनीतिक हैसियत नहीं के बराबर है, अधिकांश संघ-मोदी की कृपा से मुख्यमंत्री बने हुए हैं और बने रह सकते हैं।

जीएसटी के बाद राज्य सरकारों द्वारा वित्तीय स्रोत जुटाने के अवसर अत्यन्त सीमित हो गए हैं, जबकि केंद्र कई तरीकों से संसाधन जुटा सकता है। केंद्र सरकार के पास उधार लेने का अधिकार है, जबकि राज्य सरकारें केंद्र सरकार की अनुमति के बिना उधार भी नहीं ले सकती हैं। केंद्र सरकार बहुत कम ब्याज दर पर उधार ले सकती है, जबकि राज्य सरकारों को ऊंची ब्याज दर पर उधार लेना पड़ता है। केंद्र सरकार आरबीआई के लाभांश और रिजर्व को ले सकती है और लेती रहती है, जबकि राज्यों को यह भी अधिकार नहीं है।

भाजपा राज्यों को आर्थिक तौर पर कंगाल बनाकर और उन्हें आर्थिक तौर पर अक्षम बनाकर उनकी राजनीतिक जमीन खिसका देना चाहती है, वह देश के हिंदूकरण और कार्पोरेटाइजेशन के लिए बाध्य करने की पूरी परिस्थिति बना रही है और काफी हद तक बना चुकी है। ❑

# देश बेचने वालों से निपटना जरूरी है

❑ मुकेश कुमार सिंह

सावरकर और गोडसे की भटकती आत्माओं को अब ज़रूर चैन मिला होगा, ज़रूर चिर-शान्ति का अहसास हो रहा होगा कि उनके विद्रूप ख़ानदान में आखिर एक नौनिहाल तो ऐसा पैदा हुआ, जो कुल-ख़ानदान की धर्म-ध्वजा को आसमान से भी ऊपर ले गया! मनुष्य के रूप में जन्म लेकर जीते-जी देवत्व प्राप्त करने के लिए जितने भी वीभत्स कर्मों की सम्भावना हो सकती है, इन्होंने अल्पकाल में ही वह सब करके दिखाया है, जिसे प्रसिद्ध पत्रिका 'टाइम' ने लिखा है। वैसे अभी तो इनके स्वर्ण काल में क़रीब साढ़े तीन वर्ष और शेष हैं। तब तक भारतवर्ष को ये ऐसी जगह तक पहुँचा देंगे, जहाँ से वापस आने में सदियाँ लगेंगी!

**देशद्रोही किसान?**

उधर, ताज़ा कृषि क़ानूनों को लेकर गरमायी सियासत के तहत अब पंजाब और हरियाणा के 'बड़ी जोत वाले किसानों' पर देशद्रोहियों का ठप्पा लगा दिया गया है, क्योंकि वे देश भर की अपनी किसान बिरादरी के हितों के खिलाफ़ जाकर विपक्षियों की कठपुतली बन गये हैं। शाहीनबाग़ वालों की तरह बरगलाये और गुमराह किये जा चुके हैं। दरअसल, मोदी सरकार ये साबित करना चाहती है कि पंजाब और हरियाणा के किसान बुद्धू हैं, मूर्ख हैं, नासमझ हैं, दिग्भ्रमित हैं। जबकि बाक़ी देश के किसान खुश और गदगद हैं कि 'मोदी जी ने एक और चमत्कार कर दिखाया है। किसानों की आमदनी दोगुनी तो पहले ही हो चुकी थी, अब चौगुनी होने वाली है।'

तो क्या हम ये मानें कि पंजाब और हरियाणा के आन्दोलनकारी किसान जागरूक, समझदार और दूरदर्शी हैं? उन्होंने नोटबन्दी, कैशलेस लेन-देन, जियो क्रान्ति, स्टार्ट अप इंडिया, मेक इन इंडिया, इनक्रेडिबल इंडिया, आरोग्य सेतु, ताली-थाली, दीया-पटाखा, पुष्प वर्षा, कोरोना पैकेज़ और आत्मनिर्भर भारत के चमत्कारी जुमलों के अंज़ाम को क़रीब से देखा है। इसी ख़ुशी में हरसिमरत कौर बादल ने कैबिनेट मंत्री की कुर्सी छोड़ दी। उनकी भी आँख खुल गयी कि मोदी सरकार अब खेती-किसानी को भी अपने चहेतों के हाथों बेचने पर आमादा है। इन्हें भी साफ़ दिखने लगा कि मोदी युग में जिस मुस्तैदी से सरकारी सम्पदा को बेचने-ख़रीदने और औने-पौने दाम पर निजीकरण करने की जो बयार बह रही है, उसमें शिरोमणि अकाली दल का बह जाना तय है?

**किस्सा-ए-बोलिविया**

सारे घटनाक्रम को देखकर लगता है कि किसी ने पंजाब और हरियाणा के किसानों को लैटिन अमेरिकी देश बोलिविया का 20 साल

पुराना किस्सा सुना दिया है। वैसे ये किस्सा एनसीईआरटी की कक्षा-9 के पाठ्यक्रम में भी है। हुआ यूँ कि दशकों के फ़ौजी शासन के बाद 1982 में बोलिविया में राजनीतिक सत्ता बहाल हुई। फिर अर्थव्यवस्था इतनी चरमराई कि अगले 15 साल में महँगाई 25 हज़ार गुना तक बढ़ गयी। तब विश्व बैंक की सलाह पर वहाँ की सरकार ने अपने रेलवे, संचार, पेट्रोलियम, उड्डयन जैसे बुनियादी क्षेत्रों का निजीकरण शुरू कर दिया। इसी सिलसिले में 1999 में देश के चौथे बड़े शहर कोचाबांबा की जलापूर्ति व्यवस्था के निजीकरण का फ़ैसला लिया गया।

निजी कम्पनी को शहर की जलापूर्ति सुधारने के लिए एक बाँध बनाना था। इसके लिए धन जुटाने के नाम पर पानी का दाम चार गुना बढ़ा दिया गया। इससे ऐसा हाहाकार मचा कि पाँच हज़ार रुपये महीना औसत कमाई वाले परिवारों को एक हज़ार रुपये का पानी का बिल मिलने लगा। ख़र्च घटाने के लिए जब लोग नदी और नहरों से पानी लाने लगे तो वहाँ पहरा बिठा दिया गया। कुछ लोगों ने बारिश का पानी जमा करके अपना काम चलाना चाहा तो आदेश आया कि बारिश का पानी इकट्ठा करने पर चोरी का केस दर्ज होगा, क्योंकि वह पानी भी निजी कम्पनी का है। इससे ऐसा जनाक्रोश फूटा कि पुलिस और सेना को भी सड़कों पर उतारने के बावजूद बात नहीं बनी। आखिरकार, छह महीने के उग्र विद्रोह के बाद सरकार को वह फ़ैसला वापस लेना पड़ा।

**सर्वहारा बना भिखमंगा**

दरअसल, बोलिविया की तरह भारत में भी पूँजीवाद और बाज़ारवाद ने दशकों की मेहनत से ये धारणा बनायी है कि सरकारी तंत्र, सरकारी कम्पनियाँ और सरकारी ताना-बाना निहायत घटिया और भ्रष्ट है। इसे निजीकरण के बग़ैर नहीं सुधारा जा सकता। भारत में इसकी सबसे बड़ी वजह ये है कि देश के ज्यादातर नेता और अफ़सर देखते-देखते सम्पन्न लोगों की ऐसी जमात का हिस्सा बन चुके हैं, जो जनता और ख़ासकर ग़रीबों, मज़दूरों तथा सर्वहारा वर्ग को चोर और भिखमंगा समझते हैं। इन्हें इससे फ़र्क नहीं पड़ता कि सामाजिक व्यवस्थाएँ निजी हाथों में हैं या सरकारों के।

इससे भी रोचक तथ्य ये है कि ऐसे लोगों को ये मुग़ालता होता है कि वे शिक्षित, देशभक्त और क्रान्तिकारी हैं, जबकि वास्तव में वही समाज का सबसे भ्रष्ट तबका होते हैं। तमाम सरकारी लूट की बन्दरबांट भी यही समुदाय करता है। सार्वजनिक क्षेत्र की लूट-खसोट में शामिल ये तबका अपने घरों के ड्रांइग रूम में अपने ही जैसे लोगों के बीच परिचर्चाएँ करता है और निजी शिक्षण संस्थाओं, अस्पतालों,

म्यूनिस्पैलिटी, पुलिस, कोर्ट, चुनाव प्रक्रिया और आरक्षण को कोसते हुए उस निजीकरण की पैरोकारी करता है, जिससे देश लगातार तबाह हो रहा है।

**प्राइवेट के लिए मरेगा सरकारी**

अर्थशास्त्रीय दृष्टि से देखें तो निजी क्षेत्र के विस्तार में कोई बुराई नहीं है। बशर्ते, इसमें सरकारी क्षेत्र को मिटाकर पनपने से रोकने की व्यवस्था हो। मसलन, देश में ऑटोमोबाइल सेक्टर की तरक्की निजी क्षेत्र या बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की बदौलत ही हुई है। लेकिन ऐसा अन्य सेक्टरों में नहीं हुआ। दरअसल, मोटे तौर पर दो तरह की व्यवस्थाएँ होती हैं – सरकारी या सहकारी और प्राइवेट। आदर्श स्थिति में दोनों के बीच प्रतिस्पर्धा होनी चाहिए। लेकिन यदि एक की कामयाबी के लिए दूसरे का मरना ज़रूरी होगा, तो निजीकरण दैत्य और राक्षस बन जाएगा। बड़ी पूँजी, छोटी पूँजी को खा जाएगी, क्योंकि प्राइवेट की बुनियाद ही मुनाफ़ाख़ोरी है, जबकि सरकारी तंत्र को सियासत के प्रति संवेदनशील रहते हुए व्यावसायिक हितों को साधना पड़ता है। यही इसकी ख़ामी भी है और ख़ूबी भी।

भारत में सरकारी शिक्षा, स्वास्थ्य, दूरसंचार और उड्डयन क्षेत्र के डूबने का भरपूर उदाहरण हमारे सामने है। सरकारी क्षेत्र में कमियाँ होती हैं, लेकिन प्राइवेट के आने से पहले और बाद में इन्हें और बढ़ाया जाता है। क्योंकि सरकारी व्यवस्था ठीक रहेगी तो प्राइवेट में कौन जाएगा? मुनाफ़ाख़ोरी कैसे होगी? इसीलिए सरकारी तंत्र की जड़ों में मट्ठा डाला जाता है। सरकारी कम्पनियों को बीमार बनाया जाता है, ताकि प्राइवेट पूँजी लहलहा सके। शुरुआती पीढ़ी वाले काँग्रेसियों ने सैकड़ों सरकारी कम्पनियाँ स्थापित कीं। कई तरह के राष्ट्रीयकरण किये, लेकिन इनकी ही अगली पीढ़ियों ने तमाम किस्म की लूट-खसोट करके सरकारी तंत्र को खोखला करने की प्रथा भी स्थापित की।

**अरबों का माल करोड़ों में**

बीजेपी में कांग्रेस वाली अच्छाइयां भले ही न हों, लेकिन काँग्रेस वाली ख़ामियों के लिहाज़ से वह उससे हज़ार दर्जा आगे निकल चुकी है। सरकारी कम्पनियों को बेचने या निजीकरण के मोर्चों पर तो ये ख़ूब हुआ। इनका नया रचने में कोई ख़ास यक़ीन नहीं है, लेकिन बेचने में इनके जैसी तेज़ी भी और किसी में नहीं है। वाजपेयी ने विनिवेश मंत्रालय बनाकर अरुण शौरी को सरकारी सम्पदा बेचने का जिम्मा सौंपा। इन्होंने भी अरबों का माल करोड़ों में बेचने का काम बहुत बहादुरी से किया। अब मुक़दमे की गाज़ गिरी है। शायद, इसलिए क्योंकि अब वे मोदी राज के आलोचक हैं। फिर भी कहना मुश्किल है कि इसका अंज़ाम क्या निकलेगा।

धीरूभाई ने जब टेलीकॉम सेक्टर का रुख़ किया तो वाजपेयी ने वीएसएनएल, एमटीएनएल और बीएसएनएल जैसी तीन सरकारी कम्पनियों के हितों की अनदेखी करके रिलायंस कम्यूनिकेशन को लॉन्च किया। आज सभी देख रहे हैं कि जियो लहलहा रहा है और सरकारी कम्पनियाँ बिकने को हैं। उड्डयन सेक्टर में भी निजी कम्पनियों को मुनाफ़ा कमाने वाले रूट थमाये गये, ताकि वे निहाल हो सकें और सरकारी कम्पनियां डूबती रहें। रेलवे भी इसी राह पर चल पड़ा है। कई साल से इसका घाटा लगातार बढ़ाया जा रहा है, ताकि ये दलील तैयार हो सके कि रेलवे को बेचने के अलावा कोई विकल्प नहीं है।

**कहां बनते हैं झांसे?**

रेलवे की ज़मीन बेची जा रही है ताकि चहेतों को और मालामाल बनाया जा सके। बुलेट ट्रेन तो चलने से रही, लिहाज़ा निजी ट्रेनों को ही चलाने की तैयारी हो रही है। जनता के पैसों से बनी पटरियों पर निजी ट्रेन दौड़ेगी। ठेके पर कर्मचारी तैनात होंगे। जनता दुबली होती जाएगी। नेता और अफ़सर मोटे होते जाएंगे। ट्रेड यूनियनों का सौदा हो चुका है। नीति आयोग के सबसे बड़े कलाकार असर अमिताभ कान्त लगातार अपने आका के लिए नये झाँसे तैयार करते रहते हैं। इन्हीं का शिगूफ़ा है कि निजीकरण से रेलवे में प्रतिस्पर्धा बढ़ेगी। किराया कम होगा। जनता को लाभ होगा। भले ही सभी दिहाड़ी मज़दूर बन जाएं।

अभी युवा बेरोज़गारी से तड़प रहा है। मज़दूर भूख से सिसक रहा है। किसान गिड़गिड़ा रहा है कि बस, इतनी घोषणा कर दीजिए कि मंडी से बाहर भी कोई सौदा न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) से नीचे नहीं होगा, लेकिन कोई सुनवाई नहीं है। इन्हीं अमिताभ कान्त ने दिसम्बर 2015 में प्रकाशित नीति आयोग के एक दस्तावेज़ में किसानों की आमदनी को दोगुना करने वाला जुमला चलाया था। इसमें कहा गया था कि 'एमएसपी से किसानों का भला नहीं हो सकता, क्योंकि सरकार सारी उपज नहीं ख़रीद सकती और न ही उसे ख़रीदना चाहिए'।

**'काम की बात' ढूंढ़ना मुहाल**

2016 में नोटबन्दी के बाद इन्हीं अमिताभ कान्त ने कहा था कि दो-तीन साल में अर्थव्यवस्था कैशलेस हो जाएगी। हम देख चुके हैं कि कोरोना की दस्तक से पहले लगातार 16 तिमाहियों तक भारतीय अर्थव्यवस्था गर्त में जाती रही। कोरोना के आंकड़े रोज़ाना आरोग्य सेतु की पोल खोल रहे हैं। यही हाल पीएम केयर्स का है। 5 ट्रिलियन डॉलर भी इनके ही दिमाग़ की ख़ुराफ़ात थी तो 'स्टार्ट अप इंडिया' के भी बुनियादी चिन्तक और विचारक यही हैं। 2019 में एक सर्वे में 33 हज़ार स्टार्टअप वालों से पूछा गया कि आखिर योजना फेल क्यों हुई? जवाब में 80 प्रतिशत ने कहा कि उन्हें स्टार्टअप इंडिया से कोई फ़ायदा नहीं मिला। 50 प्रतिशत ने बताया कि अधिकारी ही लूट लेते हैं। वर्ष 2016-19 के दौरान सिर्फ 88 स्टार्टअप ही टैक्स लाभ लेने के लायक बन सके।

2014 में शुरू हुआ 'मेक इन इंडिया' भी इन्हीं के दिमाग़ का कीड़ा था। मैन्यूफैक्चरिंग सेक्टर की बदहाली और बेरोज़गारों की तादाद सारे दावों की पोल खोल देते हैं। कोई नहीं जानता कि देश की पहली स्मार्ट सिटी कहाँ है? 'इनक्रेडिबल इंडिया' तो ऐसी मनहूस योजना साबित हुई कि इसके विज्ञापनों पर जितना ख़र्च बढ़ता गया, उतनी ही विदेशी सैलानियों की संख्या घटती गयी। कुल मिलाकर, मोदी युग की सबसे बड़ी पहचान यही हो गयी है कि यहाँ 'मन की बात' की तो भरमार है, लेकिन 'काम की बात' ढूँढ़ना मुहाल है। इसीलिए 'टाइम' और बोलिविया के अनुभवों से सीखना ज़रूरी है। देश बेचने वालों से निपटना ज़रूरी है। ❑

## झारखंड भूदान

# खैरात की मानसिकता से संक्रमित नौकरशाही

❑ अरविन्द अंजुम

**शा**यद ही कोई संत इस तरह से सोचता, बोलता और लिखता हो। शैली, एकदम तार-तार कर देने वाली। समझाने वाली। सोलह आने खरी। बात जो तीर की तरह लगे,कलेजे में धंस जाए। धंसे भी ऐसी कि दर्द न हो, प्रेम की फुहारे पड़ने लगें। विनोबा ऐसे ही संत हैं; अद्भुत, अद्वितीय। अपनी आत्मकथा- अहिंसा की तलाश के प्रथम पृष्ठ के दूसरे पैरा में ही वे लिखते हैं- मैं ब्राह्मण के नाते जन्मा और शिखा काटकर ब्राह्मण की जड़ ही काट डाली।कोई मुझे हिंदू कहते हैं पर मैंने सात -सात बार कुरान और बाइबिल का पारायण किया है, मानो मेरा हिंदुत्व ही धूल हो गया।

विनोबा ने अध्यात्म की ऊंची उड़ान और गहरे गोते लगाने के साथ-साथ सांसारिक जीवन के बुनियादी मसलों को अपने अभियान का हिस्सा बनाया। जमीन के लिए न केवल विध्वंसक युद्ध हुए बल्कि यह एक ऐसा मसला है, जो सामाजिक जीवन में हमेशा विग्रह और तनाव पैदा करता है। इस मसले के समाधान के भी विभिन्न तरीके अपनाए गए हैं। कोई इसका समाधान हिंसा से करना चाहता है तो कोई कानून से। विनोबा ने कानून और कत्ल दोनों से जुदा रास्ता चुना, यह रास्ता भी उन्हें अजीबोगरीब ढंग से मिला।

1951 में हैदराबाद के निकट शिवरामपल्ली में सर्वोदय सम्मेलन होने वाला था। विनोबा जी ने तय किया कि सम्मेलन में भाग लेने के लिए वे पैदल जाएंगे। इसलिए वर्धा से वे पैदल ही निकल पड़े।यात्रा के तीसरे दिन 18 अप्रैल 1951 को पोचमपल्ली पहुंचे। गांव के हरिजन/दलित विनोबा भावे से मिले।उन्होंने कहा कि अगर उन्हें कुछ जमीन मिल जाए तो वह सब मेहनत करेंगे और मेहनत की रोटी खाएंगे। उन्हें लगभग 80 एकड़ जमीन की जरूरत थी। विनोबा ने कहा कि अगर आपको जमीन मिली तो मिलकर काम करना होगा और अलग-अलग जमीन नहीं मिलेगी। उन्होंने इस शर्त को कबूल कर लिया।विनोबा ने कहा कि इस संबंध में आप की अर्जी सरकार के पास भेजेंगे,पर इसकी नौबत ही नहीं आई।उसी सभा में रामचंद्र रेड्डी नाम के एक सज्जन ने एक सौ एकड़ जमीन देने की स्वेच्छा से घोषणा कर डाली। यह कोई साधारण घटना नहीं थी। विनोबा को तो मानो जमीन के सवाल को हल करने की चाभी ही मिल गई। भविष्य में यह एक तूफान में बदल गया और दुनिया भर में भूदान आंदोलन के रूप में प्रचलित हुआ।

विनोबा जी ने इस अभियान को आगे बढ़ाते हुए जमीन वालों से जमीन मांगना शुरू किया। उन्होंने कहा कि गरीबों पर उपकार की भावना से दान देना अहंकार है। मेरा काम तो तब होगा, जब लोग यह समझेंगे कि हवा, पानी, जमीन और सूरज की रोशनी पर हर एक का हक है। जब कई लोगों के पास बिलकुल जमीन नहीं है, तब उस हालत में बहुत ज्यादा जमीन अपने पास रखना गलत है,उस गलती से मुक्त होने के लिए हम जमीन देते हैं,इस ख्याल से देना चाहिए। विनोबा ने जोर देकर कहा कि भूमि मांग रहा हूँ,भीख नही मांग रहा हूँ। इस तरह यह आंदोलन भूमि-संबंध को पुनर्परिभाषित करने का भी उद्यम बन गया।

लगभग एक दशक तक चले भूदान आंदोलन के तहत पूरे देश भर में कुल 4763676 एकड़ जमीन दान में मिली,जिसमें से 2444222 एकड़ जमीन का वितरण किया गया।अभी भी 2319454 एकड़ जमीन शेष है, जिसका वितरण होना बाकी है। किसी एक राज्य में मिलने वाली सबसे ज्यादा जमीन झारखंड में है, जहां 1469280 एकड़ जमीन भूदान के तहत मिली, जिसमें से 497020 एकड़ जमीन का वितरण किया गया और लगभग 972000 एकड़ जमीन अभी भी वितरित होनी बाकी है। झारखंड में दान में प्राप्त कुल जमीन का दो तिहाई हिस्सा अभी भी वितरण की बाट जोह रहा है। झारखंड की विगत सरकारों की निष्क्रियता और नौकरशाही की बेरुखी के चलते यह मामला उपेक्षित पड़ा हुआ है।

झारखंड में राजनैतिक और नौकरशाही के स्तर पर भूदान आंदोलन के मर्म को न समझ पाने के चलते यह समस्या प्रकट हुई है।ये जमीन के उपयोग का मतलब केवल कारखाना, खनन, शहरीकरण, अभयारण्य आदि के निर्माण हेतु जबरन अधिग्रहण ही समझते हैं।

भूदान की जमीन से संबंधित सारे मसलों को निपटाने हेतु भूदान यज्ञ अधिनियम के द्वारा स्थापित भूदान यज्ञ कमेटी भी पिछले 10 वर्षों से झारखंड में भंग थी। आशंका है कि पिछली सरकार द्वारा भूदान में प्राप्त अवशेष जमीन को उद्योगपतियों को आवंटित करने के लिए गठित लैंड बैंक में डाल दिया गया हो सकता है। इसलिए यह निष्क्रियता अनायास नहीं है।

अक्टूबर 2019 में उच्च न्यायालय,रांची के आदेश के बाद ही झारखंड भूदान यज्ञ समिति का पुनर्गठन हो पाया। समिति में अध्यक्ष सहित 3 सदस्य पूर्व नौकरशाह हैं और बाकी दो सामाजिक पृष्ठभूमि से आते हैं। पूर्व अधिकारियों की समझ और दिलचस्पी इस विषय में सतही है। लगभग 10 महीने बीतने को हैं, पर कोई महत्वपूर्ण कदम नहीं उठाए गए हैं। 12 फरवरी 2020 को समिति की एकमात्र बैठक हुई, जिसका मिनट्स भी सदस्यों को नहीं भेजा गया है।इसी बीच राजस्व,निबंधन और भूमि सुधार विभाग के सचिव कमल किशोर सोन ने अनधिकृत रूप से एक अधिसूचना (पत्रांक-6/137/2020//874-6रा,दिनांक-30-7-2020) जारी कर सभी जिला भूदान कार्यालयों को सदर अंचल परिसर में स्थान्तरित कर अंचल अधिकारी को कस्टोडियन नियुक्त कर दिया है। इतना ही नहीं, भूदान यज्ञ समिति के कर्मियों को 'नो वर्क नो पेमेंट' के सिद्धांत को अपनाते हुए बकाया वेतन का भुगतान भी रोक दिया है।सचिव का यह आदेश न केवल भूदान की भावना एवं भूदान अधिनियम के क्षेत्राधिकार का उल्लंघन है, बल्कि आमानवीय और निष्ठुर भी है।

जब खादी को सहयोग देने के लिए खादी ग्रामोद्योग कमीशन गठित हुआ, तो विनोबा जी ने कहा कि खादी अब मिशन से कमीशन बन गयी है। इसी तरह सर्वोदय आंदोलन के निस्तेज होने और नौकरशाही के हाथ में भूदान की कमान चले जाने से यह आंदोलन खैरात कार्यक्रम में बदल गया है। जिस अभियान को विनोबा जी ने दया और अहंकार से मुक्त रखने का उद्यम किया था,आज वह उसी विषाणु से संक्रमित हो गया है। ❑

## परिचर्चा और विमर्श

**27** सितंबर 2020 को वरिष्ठ कहानीकार नसीर अहमद की पुस्तक 'एक और चंपारण कब' पर परिचर्चा एवं विमर्श समारोह उन्नाव में सम्पन्न हुआ।

परिचर्चा में भाग लेते हुए सर्वोदयी रामशंकर भाई ने कहा कि गांधीजी की ईमानदारी और सत्य पर अंग्रेजों को भी कोई संदेह नहीं था, इसीलिए उन्होंने गांधीजी की बात मानी और चंपारण के किसानों की समस्याओं का निराकरण किया। दिनेश उन्नावी ने कहा कि नसीर भाई ने इस पुस्तक के बहाने किसानों को संघर्ष हेतु प्रेरित किया है। रघुराज सिंह 'मगन' ने कहा कि नसीर भाई ने वर्तमान में गोवंश द्वारा किसानों की फसलों को बर्बाद करने और किसानों के भूखे मरने की स्थिति में आंदोलन हेतु जनता को उद्वेलित करने का काम इस पुस्तक के सहारे करने की कोशिश की है। लेखक नसीर अहमद ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि गांधीजी की यह इच्छा थी कि चंपारण आंदोलन बिहार से बाहर भी जाये, जिससे किसानों की दशा सुधरे, यदि ऐसा हुआ होता तो किसानों की आज इतनी दुर्दशा न हो रही होती। इसके अलावा शैलजा शरण शुक्ल, आलोक अग्निहोत्री तथा नीरज अवस्थी ने भी इस पुस्तक पर अपने विचार व्यक्त कर नसीर भाई के प्रयास की सराहना की और इसे वर्तमान समय की जरूरत बताया। **–रघुराज सिंह 'मगन'**

## सीतामढ़ी जिला मुख्यालय पर प्रदर्शन

**सी**तामढ़ी (बिहार) किसान विरोधी तीनों बिल वापिस लेने तथा वन नेशन वन एमएसपी (सीटू + 50% जोड़कर) कानून बनाने की मांग को लेकर भारत बंद के दिन किसानों का जुलूस आक्रोश मार्च करते हुए कारगिल चौक पहुंचा। चौक को जाम करके केन्द्र तथा राज्य सरकार को किसान विरोधी बताते हुए जमकर नारेबाजी की गयी। कारगिल चौक पर ही एक सभा किसान नेता जयप्रकाश राय की अध्यक्षता में हुई। मोर्चा नेता तथा सर्वोदयी डॉ. आनन्द किशोर ने कहा कि बहुमत की सरकार ने कोरोना आपदा में आनन-फानन में किसान विरोधी काला विधेयक लाकर किसानों को कारपोरेट के हाथों गिरवी रख दिया है। तीनों बिल वापस होने, एमएसपी को कानूनी दर्जा देने तथा सभी राज्यों के सभी किसानों, गरीबों, बटाईदारों के कृषि उत्पादों की खरीद सुनिश्चित होने तक संघर्ष जारी रखने का ऐलान किया गया। **–डॉ. आनंद किशोर**

## जमशेदपुर में प्रदर्शन

**ज**मशेदपुर की संस्थाओं और संगठनों से जुड़े हुए प्रतिनिधियों एवं प्रबुद्ध नागरिकों ने 26 सितंबर को उपायुक्त कार्यालय के सामने देश में जनतंत्र एवं संघीय ढांचे पर लगातार हो रहे हमले एवं राज्यों के बकाये जीएसटी एवं खनिज रॉयल्टी के अविलंब भुगतान के पक्ष में एक प्रदर्शन आयोजित किया और राष्ट्रपति के नाम संबोधित एक ज्ञापन उपायुक्त को सौंपा।

इस ज्ञापन में कहा गया कि जीएसटी एवं खनिज रॉयल्टी की राज्यों के हिस्से की रकम का केंद्र सरकार अविलंब भुगतान करें।झारखंड का केंद्र सरकार के पास इन मदों में लगभग 80 हज़ार करोड़ रुपये बकाया है। ज्ञापन में यह भी मांग उठाई गई कि जीएसटी संघीय संरचना पर हमला है, इसलिए इस कर संग्रह पद्धति को निरस्त किया जाए।

ज्ञापन में राज्य सभा द्वारा ध्वनि मत से पारित किसान संबंधी विधेयकों तथा विपक्ष की अनुपस्थिति एवं बिना बहस के पारित श्रम कानून संशोधनों पर राष्ट्रपति से हस्ताक्षर नहीं करने का भी आग्रह भी किया गया। **–अरविन्द अंजुम**

## दुनिया की दीवारों में रचनाकार खिड़की के समान : प्रो. शंभुनाथ

**डॉ.** राही मासूम रजा साहित्य अकादमी एवं प्रकाशक मंच के संयुक्त तत्त्वावधान में एक सितंबर 2020 को फेसबुक लाइव के माध्यम से डॉ. राही मासूम रजा साहित्य सम्मान समारोह 2020 का आयोजन सम्पन्न हुआ। इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि के रूप में वरिष्ठ साहित्यकार तथा प्रतिष्ठित पत्रिका 'वागर्थ' (भारतीय भाषा परिषद) के संपादक, प्रो. शंभुनाथ उपस्थित रहे, जिन्हें वर्ष 2020 के डॉ. राही मासूम रजा साहित्य सम्मान से अलंकृत किया गया।

कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. नमिता सिंह ने की। अपने अध्यक्षीय उद्‌बोधन में उन्होंने अकादमी की स्थापना के उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुए कहा कि राही की सामाजिक चिन्ताएं अत्यंत व्यापक और गहरी थीं। वे हिन्दुस्तानी सभ्यता और साझी संस्कृति के प्रतीक थे। राही की निर्भीकता और स्पष्टवादिता उनके लेखन को वैशिष्ट्य प्रदान करते हैं। प्रतिवर्ष राही के जन्मदिन पर उनकी परंपरा के लेखकों का सम्मान करके अकादमी वस्तुतः राही की प्रगतिगामी वैचारिकी को आगे बढ़ाने का कार्य करती है।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित आलोचक तथा संपादक प्रो. शंभुनाथ ने डॉ. राही मासूम रजा साहित्य सम्मान सहर्ष स्वीकार करते हुए कहा कि राही के संपूर्ण लेखन में अंतरसांस्कृतिक प्रेम प्रथम मूल्य है। उनकी धर्म निरपेक्ष सांस्कृतिक चेतना तथा गंगा-जमुनी तहजीब के प्रति विराट समर्पण हमें आकर्षित करते हैं। ऐसे रचनाकार के नाम पर दिये जा रहे सम्मान से विभूषित होना स्वयं को गौरवान्वित करना है।

कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि के रूप में शिक्षाविद डॉ. नदीम हसनैन उपस्थित रहे, जिन्होंने राही की शायरी के कुछ अनभिज्ञ पहलुओं पर प्रकाश डाला। अकादमी के महामंत्री रामकिशोर ने अकादमी के सिद्धांतों और उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुए उसकी वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत की तथा वर्ष भर चली अकादमी की गतिविधियों व क्रियाकलापों से सभी को अवगत कराया।

डॉ. गीता दूबे ने प्रो. शंभुनाथ के रचनात्मक अवदान की चर्चा करते हुए उनकी साहित्यिक यात्रा को श्रोताओं के साथ साझा किया तथा डॉ. अलका प्रमोद ने सम्मान-पत्र का वाचन किया।

अकादमी की अध्यक्षा सुश्री वंदना मिश्र ने राही के सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में किये गये कार्यों का स्मरण करते हुए उनके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की। अंत में उन्होंने उपस्थित विद्वतजनों एवं श्रोताओं के प्रति आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम का संचालन राजुल अशोक ने किया तथा समस्त कार्यक्रम अशोक हमराही के निर्देशन में सम्पन्न हुआ। इस दौरान साहित्य जगत के सम्मान्य विद्वानों के अतिरिक्त विभिन्न विश्वविद्यालयों से जुड़े छात्रों, शोधार्थियों आदि की बड़ी संख्या में डिजिटल उपस्थिति उत्साहजनक रही।

**–अम्बरीन आफताब**

*'Sarvodaya Jagat' Hindi Fortnightly*
Registered under RNI No. 35495/78, Postal Registration No. VSI-(E) 04, Valid upto 31 December 2020
Issued by S.S.P.O. Varanasi (East Division)

कविताएं

# मेरे जन-नायक की वाणी

❑ बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

गहन नील अम्बर में गरजी,
मेरे जन-नायक की वाणी!
अनिल, अनल, जल, थल में तरजी,
मेरे जन-नायक की वाणी!

जागो, जागो, अमृत-सुवन तुम,
जागो, जागो, सोने वालों;
जागो, देश-काल-निर्माता, जागो,
तुम निज भाग्य-विधाता;
जागो, इतिहासों के ज्ञाता,
जागो, तत्व-ज्ञान के दाता;
जागो, हिन्दू-सिक्ख-मुसलमां,
जागो, मेरे मानव प्राणी!
अनिल, अनल, जल, थल में गरजी,
यों मम जन-नायक की वाणी!

हिम-गिरि से टकराकर व्यापी,
इस वाणी की ध्वनि जग-भर में;
गूंजी यह ध्वनि जग मनुजों के
हृदय-हृदय में, अन्तरतर में;
गरजीं हिन्द महासागर की
प्रतिध्वनिमय उत्ताल तरंगें;
जग के महार्णवों में उमड़ीं
अभिनव वीचि-विलास उमंगें;
लेकर यह संदेश सुहावन
चहुं-दिशि बही हवा रस-सानी!
गहन नील अम्बर में गरजी,
मेरे जन-नायक की वाणी!

ये नव-नव उद्‌बोधन के स्वर,
नव-निर्माण प्रेरणाकारी;
ये आत्मार्पण के पावन स्वर,
ये नित नवल स्फूर्ति-संचारी;
महानाश का यह संदेशा,
यह निजत्व प्राप्ति का निमंत्रण;
यह अस्वीकृति की गंभीर-ध्वनि,
यह विप्लव का रुद्र-प्रभंजन;
अब तक तुमने क्या न सुनी
यह भय-भंजन-वाणी कल्याणी?
गहन नील नभ में गरजी है,
मेरे जन-नायक की वाणी!

मेरा पूरब, मेरा पश्चिम,
मेरा दक्खिन, मेरा उत्तर,
मेरी गंगा, मेरी यमुना,
मेरे सागर, मेरे भूधर,
आज ये सभी उद्‌घोषित हैं,
मेरे जन-नायक के स्वर से;
गूंजी है यह मन्द्र महाध्वनि,
युग-युग के सागर-मंथन से;
यह वाणी है मम मानस के
अमर प्राण की अमिट निशानी!
अनिल, अनल, जल, थल में गरजी,
मेरे जन-नायक की वाणी!

निबिड़ गहन, घन, नैश तिमिर का
वक्ष चीरते ये स्वर आये;
अति जाज्वल्यमान दिनमणि की
किरणें ये अपने संग लाये;
अंधकार का भार हट गया,
जन-गण-मन-सरसिज मुसकाए;
हृदय-सरोवर हुआ तरंगित,
नयनों में नव-नव रंग छाए;
नस-नस में नव रक्त प्रवाहित
मानव बने आत्म-अभिमानी!
गहन नील अम्बर में गरजी,
मेरे जन-नायक की वाणी!

# अन्तिम प्रणाम

❑ भगवतीचरण वर्मा

हिंसा का वह गरल कि जिससे
झुलस रही मानव की आत्मा
तुम शिव बनकर उसे पी गये,
तुम हे निस्पृह, हे निष्काम!
रघुपति राघव राजा राम!
पतित-पावन सीताराम!

धीर-वीर गम्भीर-व्रती तुम
परम पुरुष तुम, महायती तुम
आज मोह से मुक्त हो चुके,
हे विश्वात्मा, हे अभिराम!
रघुपति राघव राजा राम!
पतित-पावन सीताराम!

तुम मानवता के सेनानी!
तुम हे ध्यानी, तुम हे ज्ञानी!
तुम असीम में व्याप्त हो गये,
करने को अनन्त विश्राम!
रघुपति राघव राजा राम!
पतित-पावन सीताराम!

पतित राष्ट्र के अकलुष बापू!
रंगे तुम्हारे उष्ण रक्त से!
आज राष्ट्र के इन हाथों का
तुमको अंतिम बार प्रणाम!
रघुपति राघव राजा राम!
पतित-पावन सीताराम!

# ज्योति ने पायी अमरता!

❑ बालकृष्ण राव

ज्योति ने पाई अमरता, दीप ने निर्वाण!
आज पाया बिन्दु ने नव सिन्धु रूप महान।

मूक होकर कोटि कंठों
में समाया स्वर तुम्हारा,
मिल गया मंझधार में ही
कुशल नाविक को किनारा।
आज क्षण के साथ युग की हो गयी पहचान!

राष्ट्र के शव में किया था
प्राण का संचार तुमने,
स्नायुओं में फिर प्रवाहित
की रुधिर की धार तुमने।
धूलि को पद-रज बना तुमने दिया सम्मान!

सत्य का ध्रुव ध्येय पथ
तुमने अहिंसा को दिखाया,
क्षितिज बन उन्नत गगन को
भूमि पर तुमने झुकाया।
विजय का तुमने विफलता से किया निर्माण!

दे तुम्हें अंजलि हुए हैं
अश्रु जग के आज पावन,
मुक्त हो तुम, किन्तु दृढ़तर
हैं हमारे भक्ति-बंधन।
मूर्ति खोई, पर उपासक पा गया भगवान!

आज हिंसा के कठिन
आघात से अक्षय हुए तुम,
शरण देकर मरण को भी
आज मृत्युंजय हुए तुम।
देश के हित आज तुमने कर लिया विष पान!
ज्योति ने पाई अमरता, दीप ने निर्वाण! ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए प्रकाशक अरविन्द अंजुम द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा महावीर प्रेस, भेलूपुर, वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार